नट सम्राट

अंतर्भारतीय पुस्तकमाला

नट सम्राट

वि. वा. शिरवाडकर

अनुवाद
र. श. केलकर

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

पहले संस्करण में नट सम्राट का प्रकाशन कालाय तस्मै नमः
(लेखक : *चि. त्र्यां. खानोलकर*) के साथ संयुक्त रूप से हुआ था।

ISBN 81-237-1906-X

पहला संस्करण : 1976
तीसरी आवृत्ति : 1996 (*शक 1918*)
मूल © लेखकाधीन
हिंदी अनुवाद © नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, 1976
Original title : NAT SAMRAT (*Marathi*)
Translation : NAT SAMRAT (*Hindi*)
रु. 20.00
निदेशक, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया,
ए-5 ग्रीन पार्क, नयी दिल्ली-110016 द्वारा प्रकाशित

भूमिका

मराठी साहित्य का इतिहास ज्ञानेश्वर-पूर्व-काल से उपलब्ध है। पर आश्चर्य की बात यह है कि अंग्रेजी शासनकाल तक के साहित्य के इतिहास में एक भी नाटक का उल्लेख नहीं मिलता। यह सारा साहित्य लगभग भाषांतरित है और ज्ञानेश्वर से लेकर मुक्तेश्वर तक अनेक प्रतिभावान साहित्यकारों के कृतित्व के परिणामस्वरूप यह साहित्य संपन्न है। इस साहित्य में अनेक 'गीता-भाष्य' हैं। 'स्वयंवरों' की तो गिनती ही नहीं; आर्य महाकाव्यों की कथाओं के आधार पर काव्य रचनाएं इसमें बड़ी संख्या में मिलती हैं। पर नये नाटक लिखने की प्रेरणा तो दूर, 'शाकुंतल'-'उत्तररामचरित' जैसी अभिजात नाट्यरचनाओं का अनुवाद करने की प्रेरणा का भी इसमें सर्वथा अभाव है। 'काव्येषु नाटकं रम्यम्' तथा 'नवरसां-माझारी शृंगार' को रसराज मानने वाले इन 'सुसंस्कृत' साहित्यकारों को कवि-कुलगुरु कालिदास के 'शाकुंतलम्' ने भी शायद अनुवाद करने को प्रेरित नहीं किया। और लगभग सवा सौ साल पहले 'असंस्कृत' मराठी नाटक 'सीता स्वयंवर' (यानी फिर स्वयंवर ही) के रंगभूमि पर अवतीर्ण होने का उल्लेख जरूर मराठी साहित्य के इतिहास में बिना भूले किया गया है।

आज हम जिसे मराठी नाटक कहते हैं संस्कृत नाटक की विरासत होते हुए भी उसकी रचना निस्संदेह पाश्चात्य नाटक से प्रभावित हुई है। जिसे असली मराठी नाटक माना जाता है वह साधारणत: एक सौ साल पुराना है। इस सौ साल के पूर्वार्ध के नाटकों पर शेक्सपीयर की छाप है और उत्तरार्ध के नाटकों पर इब्सन की। किर्लोस्कर द्वारा प्रवर्तित संगीत-नाटक इन सौ सालों के पूर्वार्ध में अत्यंत लोकप्रिय थे। और उत्तरार्ध में संगीत-नाटक का यह प्रवाह क्षीण होता हुआ दिखाई भले ही दे, फिर भी अबाधित है, अखंड है। इस पूर्वार्ध के नाटकों की नाट्यवस्तु सामान्यत: पौराणिक थी और कभी-कभी ऐतिहासिक भी। किर्लोस्कर का पहला लोकप्रिय संगीत-नाटक 'शाकुंतल' और उन्हीं का दूसरा नाटक 'सौभद्र' था जो हमेशा लोकप्रिय बना रहा। कोल्हटकर जैसे विरले नाटककार की ही नाट्यवस्तु (मूकनायक—वीरतनय के समान) चाहे काल्पनिक प्रतीत हो परंतु उस नाट्यवस्तु पर समकालीन प्रश्नों का प्रक्षेपण सहज और स्पष्टतया सुहावना है।

इस पूर्वार्ध शताब्दी का मराठी नाटक प्रवृत्ति की दृष्टि से रोमांटिक है। इस काल

के अन्य तीन प्रमुख नाटककार हैं—देवल, खाडिलकर और गडकरी। इनमें से देवल नाट्यानुवाद में निष्णात हैं और उनके 'मृच्छकटिक' के समान ही 'आथेलो' का नाट्यानुवाद भी एक समय मराठी रंगभूमि पर छाया हुआ था। परंतु देवल के जिन दो नाटकों ने एक विशेष दृष्टि से इतिहास बनाया उनमें एक था 'शारदा' और दूसरा 'संशय कल्लोल'। 'शारदा' मराठी का ऐसा पहला महत्वपूर्ण सामाजिक नाटक है जो जरठ कुमारी-विवाह के बारे में है। पिछली शताब्दी के अंतिम दशक के अंत में, यानी रोमांटिक नाटक के कालखंड में यह नाटक पहली बार अवतरित हुआ था और इसी नाटक ने पहली बार मराठी नाटक का यथार्थवाद से परिचय कराया था। 'संशय कल्लोल' अनुवादित नाट्यवस्तु होते हुए भी नाटक-परंपरा में गिनी हुई एक अप्रतिम फार्सिकल कामेडी है। कालक्रमानुसार तत्कालीन सामाजिक समस्या को कूतने वाले 'शारदा' नाटक की प्रायोगिक लोकप्रियता यद्यपि कालांतर में घटी, पर 'संशय कल्लोल' की लोकप्रियता अब भी बनी हुई है। इसका कारण यह है कि यह नाटक कालातीत मत्सर भाव का हास्यात्मक प्रपंच प्रस्तुत करता है। 'शारदा' की वृत्ति करुण गंभीर है तो 'संशय कल्लोल' की नर्म विनोदी। परंतु इन दोनों नाटकों की लोकप्रियता का रहस्य ('सौभद्र' के समान ही) नाट्योचित संगीत है।

खाडिलकर के सभी नाटक (प्रमुख रूप से) पौराणिक एवं ऐतिहासिक हैं। पर उनके सभी नाटक प्राय: तत्कालीन राजनीति के संदर्भ में हैं। बल्कि उनके नाटकों को तत्कालीन राजनीतिक रूपक भी कहा जा सकता है। ऐसे नाटकों में उनके अग्रगण्य गद्य-नाटक हैं—'कीचक वध' तथा 'भाऊबंदकी'। परवर्ती काल में खाडिलकर ने विशेष रूप से जो संगीत-नाटक बालगंधर्व के लिए लिखे उनमें सबसे लोकप्रिय हैं—'मानापमान', 'विद्याहरण' एवं 'स्वंयवर'। प्रचलित राजनीति से जरा भी संबंध न रखने वाला खाडिलकर का एकमात्र और सर्वप्रथम नाटक है 'सवाई माधवरावाचा मृत्यु'। इस महत्वाकांक्षी ऐतिहासिक नाटक में नाटककार ने शेक्सपीयर के 'हेमलेट' तथा 'यागो' के अजरामर चरित्रों को एक साथ प्रस्तुत करने का कुतूहलजनक प्रयत्न किया है। खाडिलकर-बालगंधर्व का काल मराठी नाटक का स्वर्णयुग माना जाता है।

गडकरी के नाटक मराठी रंगभूमि का एक अलौकिक चमत्कार हैं। मराठी नाटक का यह सौभाग्य था कि प्रतिभा और कल्पना का धनी यह कवि कालांतर में मराठी नाटक की ओर मुड़ा। गडकरी के नाटक अत्यल्पसंख्यक, पर बहुगुणाढ्य हैं। ये सारे नाटक काव्य-गुणों से ओतप्रोत और अलंकृत हैं। 'प्रेम संन्यास' से लेकर 'राज संन्यास' तक उनके नाटकों का आलेख आकार की दृष्टि से मर्यादित होते हुए भी नाट्यगुणों की दृष्टि से मर्यादातीत है। गडकरी के समकालीन सभी नाटककार गद्य-प्रकृति के हैं, चाहे उनके नाटक संगीतमय ही क्यों न हों। परंतु गडकरी की प्रकृति ही मूलत: काव्यात्मक है। उनके काव्य-नाटकों की यह विशेषता है कि उनकी अभिव्यक्ति की शैली काव्यात्मक होते हुए भी उसमें नाटक का आशय कूट-कूट कर

भरा हुआ है। गडकरी के काव्य-नाटकों में गुंथा हुआ विनोद भी इस ललित लेखक की प्रतिभा का एक सुखद आविष्कार है। कहा जाता है कि काव्य और विनोद परस्पर विरोधी लेखन-प्रवृत्तियां हैं; क्योंकि काव्यजीवन की सुसंगति को कूतता है तो विनोद जीवन की विसंगति को, और इसीलिए एक ही व्यक्तित्व में इन दोनों का योग दुर्लभ मणि-कांचन योग है। पर इस प्रतिभाशाली लेखक के नाट्य-व्यक्तित्व में काव्य और विनोद दोनों समन्वित हुए हैं। दुर्योग से यदि यह महान नाटककार ठीक अपने नाट्य सर्जना काल में मृत्यु का ग्रास न हुआ होता तो मराठी नाटक का इतिहास कहीं अधिक उज्ज्वल होता।

वास्तव में वरेरकर इसी कोल्हटकर-देवल-खाडिलकर-गडकरी पीढ़ी के एक अग्रगण्य नाटककार थे, पर सौभाग्य से उन्होंने इतनी लंबी आयु पाई और साथ ही अखिल भारतीय मान-सम्मान भी, कि आज भी वे अपने में एक ही लगते हैं। यदि यह दिखा दिया जाए कि उनकी नाट्य-रचना इस शताब्दी के पहले दशक में आरंभ हुई थी तो किसी को भी इस बात पर विश्वास नहीं होगा। वरेरकर के प्राय: सभी नाटक सामाजिक एवं समकालीन घटनाओं से संबंधित हैं। 'सत्तेचे गुलाम' के महात्मा गांधी द्वारा चलाए गए असहयोग आंदोलन से लेकर सिंगापुर से किए गए सुभाष बाबू के 'दिल्ली चलो' आह्वान तक इस देश में जो भी नानाविध राजनीतिक तथा सामाजिक घटनाएं घटीं उन सभी प्रमुख घटनाओं का स्वर वरेरकर के नाटकों में सतत सुनाई पड़ता है। परिणामस्वरूप वरेरकर के नाटक, घटनाकाल में विलक्षण प्रभावशाली और घटनोत्तर काल में प्रभाव-निष्प्रभ रहे हैं। 'उत्तररामचरित' पर आधारित 'भूमिकन्या सीता' ही उनका एक ऐसा नाटक है जो शायद कालातीत साबित हो सके, अन्यथा उनके नाटकों का वही भविष्य है जो प्रचार साहित्य का होता है।

वरेरकर की ही भांति एक और विपुल-प्रसव नाटककार हैं माधव नारायण जोशी। 'विनोद' से लेकर 'वशीकरण' तक उनके कई व्यंग्य-विनोद प्रधान नाटक हैं जो उनके समय में काफी लोकप्रिय हुए थे। पर 'म्युनिसिपैलिटी' को ही नायिका बनाकर उसी नाम से लिखा गया उनका नाटक अतीत में जितना लोकप्रिय रहा है उतना ही लोकप्रिय आज और कल की लोकतांत्रिक संस्थाओं का एकमेऽवाद्वितीय भंडाफोड़ करने वाला व्यंग्यात्मक नाटक रहेगा।

1930 के लगभग शेक्सपीयर-प्रभावित मराठी नाटक का तथाकथित स्वर्णयुग समाप्त हो गया। शेक्सपीयर का जो प्रभाव मराठी नाटकों में देखा जाता है वह केवल नाट्य-रचना में ही अभिलक्षित होता है। इस नाट्य-रचना की विशेषताएं हैं— अनेक दृश्यों का एक अंक, स्वगतों की विपुलता और एक ही कथावस्तु में अनेक तथा उनमें से केवल एक विनोदार्थ कथानक। परंतु शेक्सपीयर साहित्य की महत्ता का असली तत्व— गहरा मनोविश्लेषण, चित्र-विचित्र चरित्र-चित्रण तथा मर्मज्ञ जीवन-दर्शन— मराठी नाटक में बहुत कम दिखाई देता है। पर यह भी सच है कि विश्व-भर के नाटकों के

आधुनिक संदर्भ में इससे भिन्न वस्तु-स्थिति अधिक नहीं दिखाई देती, और यह भी उतना ही सच है कि अन्य भारतीय भाषाओं के संदर्भ में मराठी नाटक की स्वत्व-संपन्नता विलक्षण रूप से लक्षणीय है।

मराठी नाटक के पूर्वकाल में शेक्सपीयर और उत्तरकाल में इब्सन के अनेक नाट्यानुवाद मराठी नाटक के लिए प्रेरणा के साधन साबित हुए हैं। बल्कि यह कहना उचित होगा कि इन्हीं नाट्यानुवादों के परिणामस्वरूप मराठी के स्वतंत्र नाटक सृजित हुए। बीच के काल में निश्चेष्ट और मरणासन्न पड़े हुए मराठी नाटक को वर्तक के 'आंधळ् यांची शाला' नामक इब्सन-प्रभावित (पर अन्य नाटकोपजीवी) नाटक ने पुनर्जीवित किया। इस नाटक ने पहली बार मराठी नाटक को एक नये अर्वाचीन नाटक का रूप दिया। प्रचलित वर्तमान यथार्थवाद की समस्या, यथार्थ के अनुकूल स्वाभाविक संवाद शैली और नेपथ्य (रागदारी के पदों की जगह), इनेगिने दो-तीन भावगीतों तथा पार्श्व संगीत की योजना तथा स्त्री पात्रों के लिए सुशिक्षित कुलांगनाओं का चयन आदि अनेकानेक नव-नाट्य-विशेषताओं का श्रीगणेश 'आंधळ् यांची शाला' नाटक ने किया। फिर भी, इसने जो सबसे महत्वपूर्ण कार्य किया वह है एक सर्वथा नयी वस्तुनिष्ठ नाट्य शैली का प्रवर्तन। इस नाटक को प्रयोग के रूप में प्रस्तुत करने वाली नाट्य संस्था 'नाट्य मन्वंतर' का नाम भी इस नाटक ने सार्थक कर दिखाया।

1930 के बाद का मराठी नाटक सामान्यत: इब्सन से प्रभावित है। पर शेक्सपीयर की ही भांति यह इब्सन-प्रभाव भी नाट्य रचना तक ही सीमित है। एक ही दृश्य का एक अंक वाले तीन अंक, स्वगत का उच्चाटन तथा सुगठित एकसूत्री कथानक—इस त्रिविध रचना-विशेषता तक ही मराठी नाटक पर इब्सन का प्रभाव दिखाई पड़ता है। परंतु वर्तमान जीवनानुभव के इब्सन-प्रणीत प्रामाणिक संशोधन-विश्लेषण इस उत्तरकालीन मराठी नाटक में अभिलक्षित नहीं होते। इतना ही नहीं, इब्सन ने जिस भाव विवश कृतक नाटक का निषेधपूर्वक बहिष्कार किया वही भावविवश कृतक नाटक इब्सन के रचनातंत्र से सुसज्जित होकर व्यावसायिक रंगमंच पर मजबूती से पैर जमाकर खड़ा हो गया। और, इस पटरी के नाटकों की लोकप्रियता आज भी वैसी ही बनी हुई है। आश्चर्य की बात तो यह है कि मध्यकाल के दो नाटककारों (अत्रे और रांगणेकर) ने इब्सन के ही 'डाल्स हाउस' की नोरा को विकृत नाट्य-स्वरूप में मराठी रंगमंच पर प्रस्तुत किया। नोरा के असाधारण व्यक्तित्व को पूरी तरह से जाने बिना ही। रांगणेकर ने 'कुलवधू' द्वारा कौटुंबिक विनोदी नाटक का एक खासा लोकप्रिय ढांचा तैयार किया और अत्रे ने 'लग्नाची बेड़ी' जैसी अफलातून फार्सिकल कामेडीज मराठी रंगमंच पर प्रस्तुत कीं। अत्रे के 'तो मी नव्हेच', 'डा. लागू' जैसे क्राइम-प्लेज, जिनमें नाट्य वस्तुत: नगण्य था, विशेष रूप से लोकप्रिय साबित हुए।

लेकिन इसी समय व्यावसायिक रंगमंच पर प्रयोगशील रंगमंच का प्रभाव भी सतत महसूस होता रहा। परवर्ती काल में कानेटकर जैसे किसी महत्वपूर्ण प्रायोगिक

नाटककार द्वारा सत्व विशेष किसी हद तक बनाए रखकर भी व्यवसाय के साथ समझौता-सा किया हुआ दिखाई देता है। 'हिमाचली सावली' जैसा कोई चरित्रप्रधान नाटक मराठी नाटक को नयी दिशा प्रदान करेगा ऐसा सुचिह्न चाहे आज दिखाई दे, पर लगता है कि अंततः 'प्रेमा तुझा रंग कसा?' जैसी उसकी कामेडी ही निरंतर लोकप्रिय रह सकेगी। या विजय तेंडुलकर-सा अखिल भारतीय कीर्ति-प्राप्त कोई एकांकी नाटककार व्यावसायिक रंगमंच पर 'शांतता! कोर्ट चालू आहे' या 'घाशीराम कोतवाल' जैसे प्रयोगशील नाटकों का प्रपंच संजोता हुआ दिखाई पड़ता है। और आज के प्रयोगशील रंगमंच ने तो अपने निजी रंगमंच से अब इब्सन को भी प्रायः मात दे दी है। आज का प्रयोगशील रंगमंच पिरंदेलो से आयोनेस्को और ब्रेख्त तक कई पाश्चात्य तथा बादल सरकार, गिरीश कर्नाड प्रभृति भारतीय नाटककारों का ऋण स्वेच्छा से स्वीकार करता दिखाई देता है।

एक ओर, कानेटकर के (उदाहरणार्थ, 'रायगडाला जेव्हां जाग येते' जैसे) ऐतिहासिक नाटक की एक संस्मरणीय विशेषता शिवाजी महाराज जैसी अलौकिक विभूति में लौकिक व्यक्तितत्व की खोज है तो दूसरी ओर, शिरवाडकर के 'नट सम्राट' नाटक में लौकिक व्यक्तितत्व में अलौकिक व्यक्तितत्व की खोज अभिप्रेत है। शिरवाडकर मराठी नाटक की वैभवशाली सांस्कृतिक परंपरा के शिरवाडकर एक प्रतिभाशाली नाटककार हैं। जिस तरह गडकरी पहले कवि 'गोविंदाग्रज' और बाद में नाटककार आदि हैं उसी तरह शिरवाडकर भी पहले कवि 'कुसुमाग्रज' हैं और उसके बाद नाटककार आदि। ये दोनों महान कवि सालंकृत भाषा-शिल्प के उद्गाता हैं। दोनों प्रवृत्तितः रोमांटिक हैं और दोनों परंपरा प्राप्त सत्व के श्रद्धावान पुजारी हैं। परिणामस्वरूप दोनों के साहित्य गुणधर्म में बहुत साधर्म्य तथा समानता है।

'नट सम्राट' नाटक की प्रस्तावना में नाटककार ने स्वयं ही कहा है कि 'किंग लीयर' को खोजते-खोजते उसे 'नट सम्राट' मिला। शिरवाडकर का शेक्सपीयर का अध्ययन सर्वश्रुत है। उनके किए हुए 'मैक्बेथ-आथेलो' के नाट्यानुवाद आदर्श माने गए हैं। उन्हीं के द्वारा रचित 'कौन्तेय', 'ययाति', 'देवयानी' जैसे पौराणिक तथा 'दूसरा पेशवा', 'वीज म्हणाली धरतीला' जैसे ऐतिहासिक नाटक अध्ययनीय नाट्य संहिताओं की गंगाजली में शामिल हो गए हैं। पर इस नाटककार को सच्ची लोकप्रियता मिली 'नट सम्राट' से। इस लोकमान्यता के साथ ही साहित्य अकादमी ने एक विशेष कालखंड में सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ के नाते 'नट सम्राट' को अभी हाल ही में अपना पुरस्कार देकर एवं गौरवान्वित करके राजमान्यता प्रदान की है।

'किंग लीयर' की खोज में 'नट सम्राट' की प्राप्ति के फलस्वरूप इन दोनों नाटकों के कथानक में कुछ साम्य होना अपरिहार्य था। 'नट सम्राट' की 'लीयर' निरपेक्ष एक विशेषता यह है कि 'नट सम्राट' में काडलिया नहीं है, यानी पितृभक्त और सत्प्रवृत्त शालीन सुकन्या नहीं है, तथा लीयर की दो कृतघ्न कन्याओं की जगह 'नट सम्राट' में

एक कन्या और एक पुत्र की योजना है। पर ये दोनों संतानें दुराचारी लीयर-कन्याओं की तरह केवल दुष्प्रवृत्त नहीं हैं तथा 'किंग् लीयर' में राजकन्या काडलिया होते हुए भी कोई पतिव्रता राजपत्नी नहीं है, जबकि 'नट सम्राट' में जो अत्यंत हृदयस्पर्शी प्रसंग हैं वे पति-पत्नी के स्नेहसिक्त आत्मीयता से संबंध रखते हैं। इसके अतिरिक्त, 'नट सम्राट' गणपतराव बेलवलकर जैसे एक सामान्य व्यक्ति हैं, जबकि लीयर जन्मजात 'किंग' है, राजा है। इसी तरह, राजपद के शैलशिखर से लीयर का अध:पात भी अधिक ध्यानाकर्षक और इसलिए अत्यंत मनोबेधक है, जबकि बुढ़ापे में अपनी ही कुछ विक्षिप्त स्वभाव विशेषताओं के फलस्वरूप अपनी संतान का सहारा गंवा देने वाले एक असामान्य नट बने हुए सामान्य व्यक्ति की दुखप्रद कहानी ही 'नट सम्राट' नाटक की कथावस्तु है। शायद इसीलिए इस 'नट सम्राट' की ट्रेजेडी जनसाधारण के अंत:करण में बहुत अधिक गहरी उतर जाती है। 'किंग लीयर' में पात्र असंख्य हैं और उनके परस्पर संबंधों से उद्भूत जटिल घटनाएं भी कई हैं। इसीलिए एक से अधिक कथानकों के फलस्वरूप 'किंग लीयर' की कथावस्तु अनेकलक्ष्य बन गई है, जबकि 'नट सम्राट' की कथा अत्यंत सादी और एकसूत्री होने के कारण एकलक्ष्य है। जो हो, 'नट सम्राट' की असीम लोकप्रियता का एक जो मर्मस्थल है वह है उसका रमणीय भाषाशिल्प—ऐसा मनोज्ञ भाषाशिल्प जिसकी अनुवाद द्वारा प्रतीति करवाना प्राय: असंभव है। आज के विद्यमान मराठी नाटककारों में काव्यप्रवृत्त नाटककार के रूप में इस महान नाटककार का स्थान अनन्य और असाधारण है।

शिरवाडकर की नाटककार के रूप में ख्याति बाद में आती है, पर कवि 'कुसुमाग्रज' के रूप में पहले।

आशा है, अखिल भारत में ख्यातिप्राप्त मराठी नाटक 'नट सम्राट' मराठीतर अन्य भारतीय भाषा-भाषियों को आधुनिक मराठी नाट्य की गुणमयता का यथोचित परिचय कराने में सफल होगा।

—माधव मनोहर

नट सम्राट

पात्र

अप्पा
कावेरी
नंदा
नलू
शारदा
विठोबा
राजा
सुधाकर
नन्ही
कलवणकर
श्रीमती कलवणकर
आसाराम
अन्य पात्र

पहला अंक

पर्दा उठता है

उस समय धीमे स्वर में और धीमी लय में मिश्रित वाद्य संगीत सुनाई देता है। रंगमंच पर एक गहरे नीले रंग का पर्दा पड़ा हुआ है। पर्दे के बीचोंबीच एक साधारण हत्थे वाली कुर्सी रखी है और उस पर एक बूढ़ा बैठा हुआ है। बैठा हुआ, यानी वास्तव में सो रहा है।

उसका लिबास है धोती, कमीज, पुराने फैशन का लंबा ढीला कोट और कानों पर लिपटा हुआ मफलर। कुर्सी के हत्थे पर दाहिना हाथ रखे और हाथ पर गाल टिकाए बूढ़ा झपकियां ले रहा है, उसकी गर्दन आगे-पीछे झुक रही है। एक ऊबड़खाबड़ छड़ी दूसरे हत्थे से लटक रही है। कुर्सी के चारों ओर स्वप्निल रंग की रोशनी पड़ रही है। उसके चारों ओर लहराने वाले संगीत की लय बढ़ती जाती है। स्वर अधिकाधिक तेज होते हैं और अंत में अटपटा कल्लोल होकर सारी आवाजें एकदम बंद हो जाती हैं जैसे अकस्मात तार टूट गए हों।

बूढ़ा चौंककर जाग पड़ता है। कुर्सी पर संभलकर बैठ जाता है। दबी आंखों से दोनों ओर देखता है और उसके बाद कोट की जेब से चश्मा निकालता है और धोती से उसे साफ करके आंखों पर चढ़ा लेता है। इसके बाद वह दर्शकों की ओर देखने लगता है। बड़ी बारीकी से प्रेक्षागृह के कोने-कोने को निहारता है और मुस्कराता हुआ दर्शकों को नमस्कार करता है, और उन्हें संबोधित करते हुए कहने लगता है:

बूढ़ा : क्षमा कीजिए, रसिक मित्रो, क्षमा कीजिए। मैं जानता हूं कि आपको काफी देर इंतजार करना पड़ा। क्षमा कीजिए, मैं एकदम लाचार था। सच तो यह है कि समय की पाबंदी भी नाटक की ही तरह हमारे शरीर में समा गई है। आप शायद जानते होंगे कि हमारी कंपनी का यह नियम था कि तीसरी घंटी बजे तो ठीक नौ बजे। इक्कीस साल तक कंपनी के नाटक का पर्दा ठीक आठ बजकर साठ मिनट पर ही उठता रहा। ऊपर उठते समय उस पर्दे ने घड़ी में कभी भी इकसठवां मिनट होते नहीं देखा

(एकदम अपने-आप से) मेरी घड़ी कहां गई? **(जेबें टटोलकर एक सुनहरी रिस्टवाच निकालता है)** गणपतराव जोशीजी ने यह घड़ी मुझे पहनाई थी—नागपुर में, हमारे हेमलेट का जब सम्मान हुआ था। सतत अपने पास रखनी पड़ती है। न जाने क्यों मैं यह मानकर चलता हूं कि जब तक यह चलती रहेगी तभी तक बाकी सब कुछ भी चलता रहेगा। **(घड़ी देखकर)** स्वीकार करता हूं। पंद्रह मिनट देर हो गई। **(घड़ी जेब में रखकर)** ठीक है। मुझे विश्वास है कि जिस तरह आज तक आपने मुझसे निभाया उसी तरह आज भी निभा लेंगे।

रसिक मित्रो—नहीं, अपने नारायणरावजी की तरह मैं आपको माता-पिता, अन्नदाता आदि नहीं कहूंगा। वैसा कहना नारायणरावजी जैसी प्यारी मूर्ति को ही जंचता था, वे थे मराठी रंगभूमि की एक अपूर्व घटना, फुट लाईट के प्रकाश में उगे हुए इंद्रधनुष। सुगंधित स्वर और संगीतमय प्रकाश। पर मुझ जैसे नट हैं चट्टान की तरह ऊबड़खाबड़ और बरसाती बादलों की तरह गरजने वाले। ऐसी धृष्टता यदि हम कर बैठें तो आप भी उसे पसंद नहीं करेंगे, और क्षमा कीजिये, इतनी विनम्रता मुझे भी नहीं भाती, आपने मुझे प्यार किया है, पर यह प्रेम क्या आपने मुझे भिक्षा के रूप में प्रदान किया है? जी नहीं—आपका प्यार मैंने कमाया है, चालीस साल, रोज रात को प्राणों की बाजी लगाकर कमाया है। लोग कहते हैं कि गणपतराव बेलवलकर बड़ा अहंकारी है। उन्हें कहने दीजिए। पंद्रह साल की आयु में ही घर की चारों दीवारें, चारों ओर से ढह गईं। सिर पर आकाश का छप्पर दिखाई देने लगा। सीमाहीन रेगिस्तान में भटकने लगा। पैरों को जमीन जला रही थी और मस्तक को आसमान। पर शून्य से चरवाहे की तरह कोई मुझे सतत पुकार रहा था। कभी प्यार से और कभी डांट-फटकार कर। इस दग्ध करने वाली यात्रा में न जाने कब साक्षात्कार हुआ कि मुझे जीना है रंगभूमि पर और केवल रंगभूमि के लिए। चालीस साल पहले दरबारी नौकरी की सिंधिया ढंग की पगड़ी पहने मैंने रंगभूमि में प्रवेश किया था, आगे का सारा हाल नहीं बताऊंगा—मुझे याद भी नहीं है। इतना जरूर है कि मैंने किनारा पा लिया! गणपतराव से शाबाशी पाई, लोकमान्य का आशीर्वाद मिला, आप जैसे रसिकों का प्यार पाया। एक नट के लिए जो-जो प्राप्य है वह सब इस गणपतराव बेलवलकर ने पा लिया है। इस संतोष पर यदि कभी अहंकार की धार चढ़ भी जाए तो आपको मुझे क्षमा कर देना चाहिए।

और सच बताऊं? बुढ़ापे में व्यक्ति के पास थोड़ा अहंकार होना भी चाहिए। उससे आसपास की रिक्तता थोड़ी कम हो जाती है। परसों

बस से कहीं जा रहा था। लंबी-चौड़ी क्यू थी और आखिर में हम। किसी हरजाई स्त्री की तरह बस बड़े नखरे से आई। खड़े-खड़े मेरे पैर सो गए थे। बस रुकी, पर पैर कमबख्त जगह से हिले ही नहीं। हाथ के थैले संभाले खुद को घसीटता-घसीटता मैं आगे बढ़ा; पर बस क्यों रुकने लगी? मेरे बुढ़ापे को चिढ़ाती हुई वह चल पड़ी, बड़े अंदाज से। 'टाईम एंड टाईड वेट फार नो बडी।' बस ने भी वही किया। पर तभी एक मजेदार बात हुई। खट से ब्रेक लगे और बस रुक गई। मेरी ओर बिना वजह शत्रुता से देखने वाला वह कंडक्टर नीचे उतरा और दौड़ता हुआ मेरे पास आया। मैं समझा, अनजाने में शायद मैं कोई गैर-कानूनी काम कर बैठा हूं। यह मुझे पुलिस चौकी ले जाएगा। इतने में— मित्रो, उस कंडक्टर ने मेरा हाथ पकड़ा और मेरे थैले संभालकर बस में पहुंचा दिए और चलते समय वह धूर्त कहने लगा— क्षमा कीजिए, आप अप्पासाहब बेलवलकर हैं, पहले पहचाना नहीं मैंने आपको। ऐसे भी लोग मिल जाते हैं। घसीटते पैरों की, हकलाती जुबान की, कांपते हाथों की थोड़ी देर के लिए विस्मृति हो जाती है। बुढ़ापे की रिक्तता में अहंकार की घंटी टनटनाने लगती है, और कहती है, तुम भी कुछ हो। पर रसिक भाइयो और बहनो, मैं आपके चरणों में लीन हूं। लाचार नहीं, पर-लीन हूं। इसी जगह देखी है मैंने अपनी पंढरी और काशी। आप ही ने मुझे उठाया है और यह संतोष की जागीर आप ही ने मुझे बख्शी है। और आज तो आपने अपने प्रेम की पराकाष्ठा ही कर दी। मुझे कबाड़खाने से फिर से बाहर निकाला और इस सम्मान निमित्त अपने चिरंतन स्नेह का यह तीन सितारों वाला सरदारी ओहदा आपने मुझे प्रदान किया। गले में पुष्पहारों की यह प्रचंड राशि पहनाई, 'नट सम्राट' की उपाधि से मुझे सम्मानित किया और चालीस हजार की थैली मुझे भेंट की। महान नाटककारों की भाषा मेरे खजाने में संग्रहीत है। शब्द— पहाड़-जैसे शब्द, सागर-जैसे शब्द, आसमान-जैसे, अग्नि-जैसे, परिंदों-जैसे रंग-बिरंगे, फूलों-जैसे मुलायम— सब-के-सब इस समय बेकार हो गए हैं। आप मेरी भावना को समझें, यही मेरी आपसे प्रार्थना है।

... सफल और संतोषपूर्ण बुढ़ापा गुलबकावली के फूल के समान है। वही मुझे मिला। दो बेटियों के रूप में सारा संसार सांप की तरह उलट पड़ने पर किंग लीयर ने क्या कहा था— याद है? **(उठता है और लीयर का अभिनय करता हुआ कहता है)**

ओ स्वर्गस्थ शक्तियो
दो अभेद्यता चट्टान की मुझे

मैं चाहता हूं सामर्थ्य सहन करने की
केवल सहन करने की।
आयु और व्यथा से जर्जरित यह बूढ़ा
खड़ा है, ओ देवताओ,
आक्रोश करता तुम्हारे द्वार पर,
उसे दान दो केवल सहनशीलता का।
यदि डाला है तुमने ही कृतघ्नता का जहर
इन छोकरियों के दिलों में
तो कम से कम करो न उपहास मेरा
मुझे लाचार कर
उनके सामने।
धधकने दो मेरा अंत:करण ऊर्जस्वित क्रोध से,
न करो लांछित मर्दानी मेरी नजर
जनों से, शस्त्रों से, आंसुओं की बूंदों से,
नहीं, बेमुरव्वत चुड़ैलो, मैं रोऊंगा नहीं
मैं लूंगा भयानक बदला,
तुम दोनों से ऐसा
कि कांप उठेगी पृथ्वी
जो आज विदित नहीं मुझे—उस कृत्य से।
तुम समझती होंगी, मैं रोऊंगा।
पर कारण रहते भी नहीं—नहीं—
मैं रोऊंगा नहीं
चाहे हो जाए मेरे दिल के असंख्य टुकड़े
आंसू की बूंद टपकने के पहले
विदूषक! मैं हो जाऊंगा भ्रमिष्ट ...

(क्षण-भर के लिए कुर्सी पकड़ता है जैसे थक-सा गया हो और उसके बाद कुर्सी पर बैठकर थोड़ा हंसता है और फिर दर्शकों की ओर देखकर) मैंने अपने वासुदेवराव केलकर जी से कहा था, वासुदेवराव शेक्सपीयर के माने हुए प्रशंसक तथा अध्येता थे—मैंने कहा, प्रोफेसर साहब, आपका यह शेक्सपीयर नाटककार नहीं, शैतान है, दुख की रोपाई करने वाला। वासुदेवराव केवल हंस पड़े और बोले, पता चल जाएगा और आगे चलकर पता चल ही गया। लीयर का काम करते समय कई बूढ़े चेहरे, उदास चेहरे मुझे दिखाई देते थे, वे रोते नहीं थे, रोते थे जवान लोग। पर वे बूढ़े अपनी-अपनी जगह फटे जा रहे थे ...

जैसे सिलबट्टे के बीच में आ गए हों ... और उन फटी हुई नजरों से बाहर निकलने वाले भय के जाले स्टेज पर आकर मेरे शरीर में घुसने का प्रयत्न करते थे। मैं हजारों में घुस रहा था और हजारों मुझमें घुस रहे थे। यह काम शैतान का नहीं, भगवान का भी नहीं, केवल नाटककार का है। (**किंचित मुस्कराता है**) पर मित्रो, सच बताऊं? दुख की ही तरह सुख का बोझा भी बूढ़ा मस्तिष्क सहन नहीं कर पाता। और इसीलिए मैंने तय कर लिया है कि अपना सुख, अपना सर्वस्व आज मैं अपने दोनों बच्चों में वितरित कर दूंगा। अपना सुख, अपनी दौलत, अपना सम्मान, आपकी आज दी हुई यह थैली— सब कुछ (**एक ओर मुड़कर किसी से बात करने के लहजे में**) नहीं, नहीं, वकील साहब, संदेह करने की जरूरत नहीं है। अजी, बरगद की यही शाखाएं हैं। एकदम सीधे, शरीफ और प्यारे हैं मेरे बच्चे! (**चिल्लाकर**) जो मैं कह रहा हूं उसमें रत्ती-भर भी फरक नहीं होगा। मेरी इच्छानुसार ही होना चाहिए। (**दर्शकों की ओर**) ये वकील सब-के-सब संदेहनगर के निवासी होते हैं। हमारे गडकरी मास्टर इन्हें जो शंकासुर कहा करते थे वह यों ही नहीं। अजी, मेरे बच्चे हैं बेले की कलियां और फूल की तरह ही मैंने उन्हें पाला-पोसा है। उनके लिए जो मैंने किया है वह बाप होने के नाते मुझे अपने मुंह से नहीं कहना चाहिए, पर आपको बताता हूं, रुपये से मैंने उन्हें नहलाया है, नहलाया। आधी आयु बीत जाने पर चार पैसे पल्ले पड़े और तभी ये बच्चे पैदा हुए। मेरी पत्नी— मैं उसे सरकार कहता हूं— वह भी एक इतिहास है। नाटक समाप्त होने के बाद नमक और राई से वह मेरी नजर उतारा करती थी। मैं साठ साल का हो जाने के बाद भी, नाटक के बाद सवेरे-सवेरे भोजन किया करता था, और वह खाती थी मेरे भी बाद। व्रत तो इतने सारे करती है कि आश्चर्य होता है कि वह जीवित कैसे है। शादी के जुए में ऐसी पत्नी पा जाना बड़े ही भाग्य की बात है। नाटकों के बुरे दिनों में हम दोनों को वनवास भोगना पड़ा, पर बच्चों को हमने तंगी नहीं भुगतने दी। और उन बच्चों ने भी समय से फायदा उठाया। अजी, नहीं तो वे नट के बच्चे थे। कंपनी के हार्मोनियम की तरह आखिर सड़क पर देखे जाते। हमारे सदाशिवराव पर क्या बीती? बिगड़े बैलों की तरह उनके चारों बच्चे, चार दिशाओं में निकल भागे, पर मेरा नंदा और मेरी नलू तो— (**एक ओर मुड़कर पुकारता है**) नंदा, ओ नंदा! (**भीतर से :** आया अप्पा, आया)। बहू और दामाद भी ऐसे मिले हैं मानो हमारे यहां ही पैदा हुए हों। ये सब बच्चे जब आ बैठते हैं तो रामपंचायन का दृश्य हो जाता है।

नंदा आता है। ये सब स्मृति की बातें होने के कारण इसके बाद आने वाले सभी पात्रों का व्यवहार अस्वाभाविक, कुछ-कुछ कठपुतलियों-जैसा लगता है। नंदा आता है और सस्मित मुद्रा में गर्दन झुकाए पास खड़ा हो जाता है।

अप्पा : यह है मेरा नंदा। एम.ए. हो गया है पगला।

नंदा : एम.काम., अप्पा!

अप्पा : एम.काम.! अरे, तेरे अनाड़ी पिता को यह भी नहीं मालूम कि ऐसी भी कोई डिग्री होती है? तो **(दर्शकों से)** यह एम.काम. हो गया है। कंपनी के मास्टर के पास जब श्रीगणेश सीखता था तो कमीज से नाक पोंछा करता था। अब एकदम साहब बन गया है! फोर्ट की एक बड़ी कंपनी में अधिकारी है। क्या नाम है कंपनी का, नंदा?

नंदा : फील्डवाकर, करनव्हस्की, तेजपाल एंड को।

अप्पा : ठीक है, ठीक है! कथोपकथन याद करने के दिन अब नहीं रहे। हजार बार बताओगे तो भी दिमाग खाली-का-खाली ही रहेगा, तो यह उस इत्यादि, इत्यादि कंपनी का मैनेजर है। पिछले दिनों कंपनी के काम से चार महीने चीन भी हो आया है।

नंदा : चीन नहीं, मलेशिया, अप्पा!

अप्पा : वही रे! बंगाल पार करते ही चारों ओर वही पीला रंग और चपटी नाक। वहां जाकर इसने कंपनी का क्या कल्याण किया है सो भगवान ही जाने! पर जब से लौटा है बराबर तरक्की पा रहा है। अब एक हजार से अधिक पाता है। इतना बड़ा हो गया है पर बिगड़ा नहीं, बहका नहीं! अब भी बात-बात पर मेरे चरण छूता है।

नंदा अप्पा के चरण छूता है।

अप्पा : अरे बस करो, बस करो! पंढरी के विठोबा की तरह मेरे पैर घिस-घिसकर गल जाएंगे। अभी यह बोझा इन्हें कुछ साल और ढोना है। पर तुमसे इतना कहे देता हूं नंदा, हम आज हैं, कल नहीं रहेंगे। पर किसी-न-किसी के चरण छूने की अपनी यह आदत जरूर बनाए रखना, बेटा! वे लोग अभागे होते हैं जिन्हें नमस्कार करने का अवसर नहीं होता। और अवसर रहते हुए भी जिन्हें नमस्कार करने का साहस नहीं होता वे और भी अभागे होते हैं। अमृत की बाजी जीतने वाली यह चीज है, नंदा! 'कांचनगढ़ की मोहना' का पहला प्रयोग था हमारी कंपनी में। पूना के किर्लोस्कर थिएटर में। पगड़ीधारी पूना था उस समय। इतना दबदबा था कि शैतान के सामने कसौटी पर खरा उतरना संभव था, पर पूना के दर्शकों के सामने नहीं। जूते में यदि कोई नुक्स हो तो बाकी सब

छोड़कर आधा घंटा उसी की ओर टकटकी लगाकर देखते रहेंगे। ऐसी कीर्ति थी उनकी। पर्दा उठने का समय हो गया। मैं बहुत बुरी तरह से घबराया हुआ था। आज अपना काम ही नहीं बल्कि सारा आकाश चौपट हो जाएगा। इतना बड़ा अभिनय मैं पहली ही बार करने जा रहा था। तेनसिंह ही था न वह, जो एवरेस्ट पर चढ़ा था। तलहटी से ऊपर बर्फ की नुकीली चोटी की ओर ताकते हुए उसकी जो स्थिति हुई होगी वही स्थिति मेरी भी हुई थी। चढ़ गया तो दिग्विजय, और गिर गया तो मौत। तभी काका साहब भीतर आए। मैंने आगे बढ़कर उनके पैर जकड़ लिए। उन्होंने आशीर्वाद दिया धीमे से। पर उनकी वह आवाज मुझे शिवाजी के डमरू की तरह दसों दिशाओं से सुनाई देने लगी। सारा डर गायब हो गया। अमृत पी गया, अंतर्बाह्य प्रकाश से भर उठा। स्टेज पर पांव रखते ही आसमान से एक-एक सितारा तोड़कर दर्शकों की गोद में फेंकने लगा, स्टेज का प्रतापराव हजारों दर्शकों के हृदय में जा घुसा। नट का जन्म हुआ। अप्पा बेलवलकर ने अपना दीपक पा लिया। शागिर्दों की भीड़ से वह कलाकारों की राजसभा में आ गया। यह था नमस्कार का प्रभाव।

नंदा फिर से झुककर नमस्कार करता है।

अप्पा : अरे, अब रहने भी दो बेटा, नमस्कार करने के लिए कहा तो इसका मतलब यह नहीं कि नमस्कार ही करते रहो। महत्व की बात इतनी ही है कि कभी मौका पड़ने पर नमस्कार करते समय लज्जा का अनुभव न करना। बाकी जो कुछ मैंने कहा, उस पर अधिक ध्यान देने की जरूरत नहीं। हम नटों की जाति ही अलग है। उसके काम भी अलग हैं। नटों को हर रात परीक्षा देनी पड़ती है। सब कुछ दांव पर लगाकर। इसीलिए हमारी दुनिया में नमस्कार, आशीर्वाद, ताबीज, गंडे-धागे, पूजा-पाठ आदि भावुक बातों के बिना काम नहीं चलता (**दर्शकों से**) तो मित्रो, यह है मेरा सुपुत्र नंदा और— (**पुकारते हैं**) बहूरानी, ओ बहूरानी! (**एक युवा लड़की आकर खड़ी हो जाती है**) यह है इसकी पत्नी शारदा। बड़ी प्यारी और उदार लड़की है। मानो पारिजात की बेल हो! बहूरानी ...

शारदा झुककर नमस्कार करती है।

अप्पा : शतायुषी हो बेटी, जल्दी से दो-तीन नन्हे-मुन्ने दो मुझे, मेरी मूंछें उखाड़ने के लिए। यों शर्माओ नहीं। (**दर्शकों से**) इसका नाम शारदा ससुर ने रखा है, पति ने नहीं। यह नाम इसे पसंद नहीं, पर बेचारी करे क्या? अलाउद्दीन के चिराग से निकले हुए राक्षस के समान जब भयानक ससुर मत्थे आ ही पड़ा है तो सहन कर रही है बेचारी।

शारदा : **(शर्माकर, मुस्कराती हुई)** हाय राम! आप यह क्या कह रहे हैं! आप सब लोगों की पसंद ही मेरी पसंद है।

अप्पा : **(दर्शकों से)** देख लिया! महाबलेश्वर के शहद की कुप्पी है। पग-पग पर अपनी मीठी बातों से चित कर देती है। **(नंदा से)** और दर्रों-कंदराओं में फुदकने वाली वह मेरी बकरी कहां है? **(आवाज देता है)** नलू—ओ नलू!—आज मेरे जीवन की सबसे बड़ी खुशी का दिन है। मैं चाहता हूं मेरे अपने सब मेरे साथ हों। **(चिल्लाकर)** नलू—ओ छोकरी!

लड़की दौड़ती आती है।

अप्पा : क्यों री, पति ने पकड़ रखा था क्या?

नलू : कैसी बातें करते हैं, अप्पा? मां की मदद कर रही थी।

अप्पा : **(दर्शकों से)** यह है हमारी कन्या! हमारे शिविर में आते ही नलू नाम धारण कर लेती है। पति की छावनी में जाते ही श्रीमती कालिंदी कार्लेकर, केयर आफ सुधाकर कार्लेकर, डिप्टी इंजीनियर, नासिक डिवीजन, बन जाती है।

नलू : **(नमस्कार करती हुई)** नमस्कार करती हूं, अप्पा!

अप्पा : अष्टपुत्रा ...

नलू : ना बाबा!

अप्पा : ठीक है, ठीक है! मैं भूल गया। पहले इस विभाग का कार्य स्वर्ग से होता था, अब दिल्ली से होता है। उन्होंने मनाही कर दी है अष्टपुत्रों की। अच्छी बात है। तुम्हारी मनोकामना पूरी हो, यही आशीर्वाद है मेरा। **(दर्शकों से)** इस लड़की ने बी.ए. तक प्रथम श्रेणी नहीं गंवाई। एक बड़े इंजीनियर से शादी करके वहां भी यह प्रथम श्रेणी में ही पास हुई है। नासिक में एक बांध पर नियुक्ति हुई है हमारे दामाद की। **(सुधाकर आता है)** आइए, दामाद जी!

सुधाकर नमस्कार करता है।

अप्पा : क्यों दामाद जी, मैंने सुना है, अगली परीक्षा के लिए आपको जर्मनी जाना है?

सुधाकर : विचार तो है! देखिए क्या होता है?

अप्पा : होगा, सब-कुछ होगा, जहां ससुर है वहां रास्ता भी है! आपको जर्मनी जाना है और इस कबूतर के जोड़े को बंबई में अपना फ्लैट खरीदना है। इसी बारे में मैं आप लोगों से कुछ कहना चाहता हूं। ... पर हमारी लक्ष्मी जी कहां हैं? **(जोर से)** सरकार, अजी सरकार! **(दर्शकों से)** आप जानते हैं ना? उसका नाम कावेरी है। पर मैं उसे इसी नाम से पुकारता हूं। **(मुड़कर)** सरकार!

नंदा : मां— ओ मां!

नलू : मां— ओ मां!

भीतर से आवाज : आई बाबा, आई।

अप्पा : **(भीतर की ओर)** अजी, तुम क्या सूत्रधार की पत्नी हो जो बाहर आने में इतनी देर लगा रही हो!

कावेरी आती है। हाथ में एक पतीला लिए।

कावेरी : क्या है? चूल्हे पर तवा जला जा रहा है उधर!

अप्पा : पचास साल तुमने जले हुए तवे से ही काम चलाया है। बचे हुए समय में मेरे साथ।

कावेरी : कैसी बातें कर रहे हैं आप, ऐसा क्या काम है? अभी खाना बनाना है। चार आदमी खाने आने वाले हैं आज।

नंदा : पर मां, रसोइये तो कर रहे हैं सबकुछ! तुम क्यों नाहक ...

अप्पा : देखो नंदा, तुम्हारी मां जैसी स्त्रियों को तब तक तसल्ली नहीं होती जब तक वे स्वयं न करें। रसोइये हैं केवल प्रांपटर, अटकते ही आगे बढ़ाने वाले। सरकार, पांच मिनट ठहरिये। आज तक किसी भी बात में मैंने आपकी सम्मति नहीं ली। पर आज मुझे लेनी है। आज का दिन हमारे जीवन में मंदिर के कलश के समान है। बनवाने का काम समाप्त हो गया। इसका दुख है, पर मंदिर पूरा हो गया इसका आनंद है। दुख अटल है, इसलिए आनंद अधिक है। सरकार, तुमने मेरा पचास साल साथ दिया है। साझीदार रहीं, पर उसमें पहरेदार की तरह मुझे जो इनाम मिला उसमें से अपना आधा हिस्सा तुमने कभी भी नहीं मांगा। जो हिस्सा तुमने बंटाया और जिद से ले लिया था वह था केवल आघात सहन करने का। जो मिला पकाया, जो मिला ओढ़ लिया। अलाव में पड़ी हुई चैली का जीवन तुमने स्वीकार किया। दूसरों के लिए जलने का और सो भी हंसते-खेलते जलने का। पसंद-नापसंद की भी कोई बात तुम्हारे मुंह से नहीं निकली ...

कावेरी : आज आप यह सब क्या कहे जा रहे हैं? पसंद-नापसंद की बात नहीं कही तो कौन-सा तीर मार दिया? मुझे जो चाहिए था वह सब मैंने पा लिया, आकंठ पा लिया। जो नहीं पाया, वह चाहिए किसे था? उसे पाने का विचार भी मेरे मन में कभी नहीं आया।

अप्पा : शाबाश! आज पहली बार इतना बोलीं तुम मेरे सामने। एक नाटककार कहा करते थे कि आयु बढ़ने पर पुरुषों का पेट और स्त्रियों की जुबान बढ़ने लगती है। अच्छी बात है। बच्चो, अब मैं बूढ़ा हो गया हूं। दूसरा अंक भी समाप्त हो गया। अब तीसरे अंक की शुरुआत है। दिन-पर-

दिन मैं अंतिम भरत वाक्य की ओर बढ़ा जा रहा हूं ...

नलू : अप्पा!

अप्पा : कुछ नहीं कहा जा सकता कि नाटककार भगवान इस नाटक को कब और कैसे समाप्त करे? पर आज हजारों रसिकों द्वारा उसका वरदहस्त मुझ तक पहुंच गया है। इस समय, मेरे बच्चो, मैं कृतार्थ हूं। दुख अपने पास रखो और सुख बांट दो— यही सीख मेरे नाटकों और नाटककारों ने मुझे दी है। किसी ने कहा है— चांद अपना कलंक अपने पास रखता है और प्रकाश दुनिया को बांट देता है। बांटने योग्य प्रकाश आज तक मेरे पास नहीं था। आज जो है वह सब मैं बांट देने वाला हूं। इस बोझे को मुझे हल्का करना है। दस हजार रुपये मैंने उन संस्थाओं और कामों के लिए दे दिए हैं जिन्हें मैं आदर की दृष्टि से देखता हूं। शेष अपनी सारी संपत्ति इन चालीस हजार रुपयों समेत, अपनी इन दो संतानों में बराबर-बराबर बांट देने का मेरा इरादा है।

नंदा : अप्पा!

नलू : अप्पा!

कावेरी : छि:, इतनी-सी बात के लिए मुझे बुलाया? मैं जाती हूं। उधर चावल जल जायेंगे।

अप्पा : जरा ठहरो! तुम राजी हो न?

कावेरी : न होने की क्या बात है? आप जो भी करें मेरे सिर-माथे पर। थाली में रहे या कटोरी में गिरे, बात एक ही है।

नलू : **(आवेग से अप्पा के घुटनों से लिपट जाती है)** अप्पा! यह क्या ठान रखी है आज आपने? यह सब फैसला आज ही क्यों कर रहे हैं? हमें कुछ नहीं चाहिए, अप्पा— हमें केवल आप चाहिए— आपका प्यार चाहिए— पीठ सहलाने वाला आपका हाथ चाहिए, और कुछ नहीं—

सिसकने लगती है और एकदम उठकर एक ओर हो जाती है।

नंदा : सचमुच नहीं चाहिए, अप्पा! जो मैं कहना चाहता हूं शब्दों में नहीं कह सकता। पर यह बड़ी विचित्र बात है— बड़ी विचित्र बात है। आपको मेरी सौगंध, अप्पा—

अप्पा : **(उठते हैं और क्रोध से चिल्लाते हैं)** मैं तय कर चुका हूं, बच्चो, तुम जानते हो कि जो यह अप्पा बेलवलकर एक बार तय कर लेता है वह पत्थर की लकीर होती है। मैंने तुमसे नहीं पूछा है। पूछा है केवल सरकार से। तुम्हें लेने का अधिकार है, चर्चा करने का नहीं। **(एकदम मुलायम होकर। नंदा और नलू को दोनों हाथों से अपने पास समेटते हुए प्यार-भरे स्वर में कहते हैं)** बच्चो, अरे जो सरकार ने कहा, वही सच

है। जो कटोरी में है वह केवल थाली में गिर रहा है। उसके लिए इतना परेशान होने की क्या जरूरत है? मेरी सबसे बड़ी संपत्ति तो तुम्हीं हो, बच्चो! (**दर्शकों से**) आपसे सच कहता हूं, मित्रो, जीवन में पैसे की परवाह मैंने कभी की ही नहीं। हमारे कवि कहा करते हैं कि जमीन सूरज के चारों ओर चक्कर नहीं लगाती, वह रुपये का चक्कर काटा करती है। शायद ऐसा ही हो, पर उस पृथ्वी पर मैं अधिक रहा ही नहीं। मेरी पृथ्वी और थी, कवि की प्रतिभा से निर्मित, थिएटर के अंतराल में संतुलित, सूरज-चांद से नहीं, बल्कि रंगमंच की बत्तियों से प्रकाशित। मेरे ऐसे संस्कार में रुपये-पैसे के ये जर्मा-खर्च अधिक पहुंच ही न पाए। जब रुपया मिला तो हस्ति नक्षत्र की घमासान वर्षा की तरह मुझ पर बरसता रहा। नाटक के नशे में मुझे पता नहीं कि भगवान ने रजवाड़े का यह पर्दा कब उठा लिया और जंगल का सीन कब खड़ा कर दिया। पर नट से प्यार करने वाले लोग भी नट की ही तरह पागल होते हैं। उन्होंने मेरा जमा-खर्च संभाला, मेरे व्यवहार पूरे किए। कंपनी के नाम कर्ज निकाला और गल्ले पर बैठे-बैठे उसे चुकाया, आखिर पराजय का सफेद पर्दा पीछे तन गया और मेरे बुढ़ापे ने, मन ने नहीं, रंग देवता को अंतिम नमस्कार किया। बच्चों को होस्टल में रखा और मैं अपने गांव जाकर रहने लगा। बरगद के चबूतरे पर बैठे बरगद के पेड़ को और हनुमान जी की मूर्ति को मैं अपने कथोपकथन सुनाया करता था। रंगभूमि ढह गई थी, नट समाप्त हो गए थे, सब-का-सब नष्ट हो गया था। प्रकाश के भय से मैं एक सुरंग के दलदल में रहा करता था—जख्मी ऊदबिलाव की तरह। वैसे देखा जाए तो मैं सुखी था। साफ हवा थी, मिलनसार लोग थे, काली जमीन का वात्सल्य भी अपार था। पर मैं एक गिरी हुई इमारत का ढाला हुआ पत्थर हूं, यह बात भुलाए नहीं भूलती थी। आगे चलकर एक वह दिन भी आया जब हमारे तहखाने के फाटक पर सिंगी तुरही की आवाज सुनाई देने लगी, रंग-बिरंगे झंडे फहराने लगे और नट श्रेष्ठ, नट सम्राट के नारे गूंज उठे। मुझे अंधेरे से बाहर निकालने के लिए मराठी जनों का जुलूस दरवाजे पर आ धमका। उस जुलूस का नेतृत्व कर रहा था एक—कहां है वह डाक्टर? एक उम्दा व्यक्ति, प्रचंड पहाड़ से खोदकर निकाला हुआ एक बलराज का पुतला। उसने गले से स्टेथस्कोप निकाल फेंका और मखमली पर्दे की रस्सी थाम ली। धूपदानी की जलती आग पर अपना जीवन लोभान की तरह छिड़क दिया। असली मराठी आदमी। पर यह मैं उसके पीछे कह रहा हूं। सामने कहूं तो सिंह के समान मुझ पर दहाड़ेगा—बेलवलकर, चुप रहिए और अपने अभिनय

को याद कीजिए।—यहीं कहीं होगा वह—अजी, उसी ने तो यह सब किया है और आज मेरे सिर पर सेहरा बांधा। **(थिएटर में चारों ओर देखते हुए)** अजी डाक्टर साहब, डाक्टर साहब! नहीं मिलेगा वह। स्वयं उभारे हुए काम से गुम हो जाना, यह उसकी हमेशा की आदत है। नहीं—पर अपनी उम्र के बहाने मैं भी एक बार उसे आड़े हाथों लूंगा—अरे बाबा, काम करो, पर अपने शरीर का, अपनी गृहस्थी का भी तो थोड़ा ध्यान रखोगे या नहीं?—नहीं है न कहीं? नहीं मिलेगा वह—अच्छी बात है! तो क्या कह रहा था मैं? देखा, यह होता है। भटकने लगता हूं। हां, मैं फिर एक बार प्रकाश में आया। बुढ़ापे में जो कुछ संभव था मैंने किया। गले हुए, फीके कीमती सालू जो मैंने सेंत कर रखे हुए थे, दर्शकों को दिखाई। उन्होंने भी सद्‌भावना से उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की। अच्छा हुआ, अब इन बच्चों के भरोसे सचमुच रिटायर हो गया हूं। हमेशा के लिए। मोरवाडी की खेती बेच दी, रुपये आए। वह काम भी इस डाक्टर के कारण पूरा हो सका, नहीं तो एक पैसा भी पल्ले न पड़ता। इस तरह हिसाब हो गया। मन से कुछ लोगों का कर्जा चुकाए बैठा था। वे रकमें डाक्टर की सलाह से चुकती कर दीं और शेष सब—परनाले में बचा हुआ बरसाती पानी—आज आपके सामने अपनी इन दो कोंपलों में विभाजित कर रहा हूं। नंदा, दादर और पार्ले के बीच एक अच्छा-सा फ्लैट देख लो, और दामाद जी, आप पासपोर्ट ही कहते हैं न उसे, उसे निकालने में जुट जाइए। नंदा, यह है मिला हुआ चैक। आधी-आधी रकम बांट लेना। शेष संपत्ति के कागजात दोपहर को वकील साहब ले आएंगे।

क्षण-भर के लिए आंखें मूंद लेते है।

बड़ी खुशी हो रही है मुझे! बच्चो, जो हमारा था वह अब तुम्हारा हो गया है। हम दोनों भी अब तुम्हारे हो गए हैं। सर्वथा तुम्हारे। हम दोनों कुछ दिन नंदू के यहां रहेंगे—उसके नये फ्लैट में। कुछ दिन नलू के यहां रहेंगे—उसके पहाड़ी बंगले पर।

नलू : **(सुन्न होकर)** अप्पा! बंबई में नहीं, आप दोनों हमेशा के लिए हमारे यहां रहें।

नंदा : **(आंखें पोंछते हुए)** बड़ी चालाक बनती हो! कभी त्योहार-व्योहार पर आएंगे तेरे यहां, बाकी यहीं रहेंगे, मेरे यहां।

अप्पा : **(दर्शकों से)** देख लिया आपने? नट बेलवलकर समाप्त हो गया। अब वह केवल बाप के रूप में शेष है। इस प्यार के कलह में फंसा हुआ। **(बच्चों से)** बच्चो, इस सबके बदले एक चीज मुझे मांगनी है तुमसे।

नंदा : मांगनी है न कहिए, आज्ञा कीजिए।

अप्पा : मांगना इतना ही है कि तुम दोनों के घरों में कम-से-कम दो-दो बच्चे हमें मिलने चाहिए। उसके बाद बेशक करो देश की जनसंख्या की चिंता।

नलू : छि:, कैसी बातें कर रहे हैं?

नंदा : छि:, कैसी बातें कर रहे हैं?

कावेरी : अब मैं जा सकती हूं? सारी रसोई चौपट हो जाएगी उधर।

अप्पा : जरा ठहरो! इन बच्चों को जाने दो।

कावेरी : यानी?

अप्पा : बच्चो, तुम्हें अपने काम हैं न? जाओ, नंदा, दामाद जी आप भी जाइए अब! नलू, मां के लौटने तक जरा चूल्हा देखना।

कावेरी : अजी, आप भी कैसी बातें कर रहे हैं? बच्चे हंस रहे हैं, आपको ...।

अप्पा : हंसने दो, प्रेम करने का ठेका केवल नौजवानों ने ही नहीं लिया है। खांसते-खंखारते ही सही, पर हम भी कर सकते हैं। जाओ अब— हंसो, बच्चो— पर जाओ—

कावेरी के सिवा और सब लोग हंसते हुए जाते हैं।

कावेरी : आज क्या हो गया है आपको? इस उम्र में क्या यह अच्छा लगता है?

अप्पा : सुनो कावेरी, भाषण न दो। जरा इधर तो आओ ...

कावेरी : अजी लेकिन ... कुछ समय भी तो ...

अप्पा : (**जोर से**) इधर आओ।

कावेरी : (**आगे बढ़ती है**) जी, क्या है?

अप्पा : (**रौब से**) यह देखो—

कावेरी : क्या?

अप्पा : चंद्रहार है। तुम्हारे लिए लाया हूं। समारोह के बाद उधर ही गया था। इसीलिए लौटने में देर हो गई।

कावेरी : (**अपना आनंद छिपाती हुई**) अब मेरे लिए जेवरों की क्या जरूरत है? बच्चों को दे देते।

अप्पा : बच्चों को जो देना था दे दिया। यह तुम्हारे लिए है।

कावेरी : आज तक क्या मुझे कम दिया है आपने?

अप्पा : मैंने नहीं दिया। जिस जगह पर तुम थीं उस जगह ने दिया। जीवन में पहली बार आज मैं तुम्हें दे रहा हूं। आज पहली ही बार मैं तुम्हारे लिए बाजार गया, कावेरी! अच्छा हुआ जो सर्राफ जान-पहचान का निकला। नहीं तो पांच मिनट में मुझे चूना लगा देता।

कावेरी : अजी— लेकिन— काफी कीमती जान पड़ता है यह।

अप्पा : कितने का होगा?

कावेरी : मैं क्या जानूं? नमक-मिर्च का भाव मैं जानती हूं। बताई भी ...

अप्पा : दो हजार का।

कावेरी : बाप रे! इतनी बड़ी संपत्ति मैं गले में लटकाए फिरूं? लोग कहेंगे, सठिया गई है बूढ़ी।

अप्पा : कहने दो, जरा पहनकर तो देखो। ठहरो, न हो तो मैं ही पहनाए देता हूं।

कावेरी : ना-ना! बच्चे आ जाएंगे।

अप्पा : आने दो। मैं उनके बाप से नहीं डरता।

कावेरी : पर— मैं कहती हूं ...

अप्पा : (**चिल्लाते हैं**) ठहरो। खड़ी रहो। (**हार पहनाते हैं**) अहा! कितनी प्यारी लगती हो।

कावेरी : (**सुख से परेशान होकर**) हे राम! बड़ा मुश्किल है अब।

अप्पा : पसंद आया?

कावेरी : छि:, क्या सब कुछ कह देना जरूरी होता है?

अप्पा : नहीं, मैं जानता हूं। अच्छी बात है। अब तुम जा सकती हो। पर सरकार, मेरा निबटारा तुम्हें सचमुच पसंद है न?

कावेरी : फिर वही! अजी अपने ही तो बच्चे हैं। लेकिन ...

अप्पा : लेकिन क्या?

कावेरी : मैं कहती हूं, आज ही इतनी जल्दी करने की क्या जरूरत थी? लोग बेशक बुरे न हों, पर बुढ़ापा बुरा होता है। सामने परोसी हुई थाली भले ही दे दे, पर आदमी को अपना आसन नहीं देना चाहिए।

अप्पा : (**ठहाका मारकर हंसते हुए कुर्सी पर बैठते हैं**) पगली! तुम क्या समझती हो बच्चे हमें घर से निकाल बाहर करेंगे? (**हंसता है**) करने दो। पंढरपुर के बाबा जवेरी मेरे परिचित हैं। उनसे कहूंगा, मां-बाप के छोड़े हुए बच्चों की तरह बच्चों के छोड़े हुए मां-बाप के लिए भी वे आश्रम चलाएं।

कावेरी : अब तो जा सकती हूं? (**अंदर जाते-जाते**) आपका टानिक ले आती हूं।

अप्पा : अजी, मनुष्य के प्रेम से बढ़कर दूसरा टानिक नहीं संसार में। आज मैं टानिक के सागर में तैर रहा हूं। टानिक नहीं, केवल एक कप चाय ले आओ, फर्स्ट क्लास— अपने हाथों से बनाई— अपने हाथ से बनाई— अपने हाथ से बनाई— चाय—)

रोशनी धीमी होने लगती है, और अंधेरा हो जाता है। क्षण-भर खामोशी है। उसके बाद ...

आवाज : (**अंधेरे में ही**) चाय! मेरी चाय! अरे, कोई मेरी चाय ले आओ। सरकार! शारदा, नन्ही— आसाराम— घर में कोई है या नहीं? सरकार ...!

रोशनी होने लगती है। अब पिछला नीला पर्दा सरका हुआ है। प्रकाश की आभासात्मकता भी अब हट गई है। रंगमंच स्मृति से वास्तविकता में आ गया है।

अप्पा उसी तरह कुर्सी पर बैठे हुए हैं। उपरोक्त शोर मचाते। उनके चारों ओर सुंदर फ्लैट का एक सुसज्जित कमरे का दृश्य है, जिसमें सामान बिखरा पड़ा है।

पूरी तेज रोशनी में ...

नौकर : (**प्रवेश करके**) ये रही चाय (**कप देता है**)। मालकिन ने कहा है, इस तरह चिल्लाया न कीजिए।

अप्पा : (**चाय पीते-पीते**) नहीं चिल्लाऊंगा, पर सरकार—

नौकर : (**कमरे में कुछ ठीक-ठाक करता है**) बड़ी मालकिन बाजार गई हैं। (**अपने-आपसे बड़बड़ाता है**)। हर बात में बाबा को बड़ी मालकिन लगती है।

अप्पा : क्या कहा?

नौकर : कुछ नहीं, जल्दी से चाय पी लीजिए। साहब आफिस से आने को हैं। उनका चाय-पानी भी देखना है मुझे।

अप्पा : (**चाय गटकते हुए**) हां-हां— नंदा के आने का समय हो गया। कई दिनों से नहीं देखा बेटे को। तबीयत तो ठीक है उसकी?

नौकर : फर्स्ट क्लास है। दीजिए प्याला मुझे। (**प्याला लेकर जाने लगता है**)।

अप्पा : और नन्ही आ गई रे?

नौकर : अभी-अभी आई है दीदी।

अप्पा : उससे कहो ...

नौकर : अच्छा याद है मुझे।

अंदर चला जाता है।

अप्पा : अब भी बहरा नहीं हुआ मैं। अंधा हो रहा हूं, पर बहरा नहीं होता। सृष्टि की यह मेहरबानी कानों में चिपकी बैठी है। किसी चिरंतन शाप की तरह।

अंदर से 'दद्दा', 'दद्दा' छोटी लड़की की आवाज में सुनाई देता है।

अप्पा : और यह एक मधुर आवाज। मेरी प्यारी नन्ही— मेरी गुड़िया ... (**छड़ी के सहारे आधा उठकर**) आ, नटखट आ-आ ...

लड़की : (**दरवाजे के पास खड़ी होकर, रूठने का अभिनय करती हुई**) मैं नहीं आऊंगी, जाओ। कभी नहीं आऊंगी।

अप्पा : शैतान की खाला, आकर भी न आऊंगी कहने के लिए तू क्या अपने-

आपको 'मानापमान' नाटक की भामिनी समझती है? पर रूठी क्यों है, मेरी रानी बिटिया?

लड़की : यों ही।

अप्पा : (**बैठकर**) यों ही?

लड़की : हां, यों ही। (**दौड़कर आती है और उनके गले से लिपट जाती है**) कैसा बनाया एक आदमी को!

अप्पा : अरी बदमाश!

लड़की : हमारे स्कूल में न, दद्दा, आज बड़ी मजेदार बात हुई!

अप्पा : क्या मजेदार बात हुई? मास्टरनी भाग गई तेरी?

लड़की : धत, कैसी बातें करते हैं? हमारी दीदी को मास्टरनी न कहिए। बड़ी अच्छी है हमारी दीदी।

अप्पा : अरे पर नन्ही, कौन-सी मजेदार बात हुई?

लड़की : मेरा नाम नन्ही नहीं है।

अप्पा : तो क्या बन्नी है?

लड़की : नहीं, आपको याद क्यों नहीं रहता? ठहरिए, मैं आपके हाथ पर लिखे देती हूं।

हथेली पर अंगुली से लिखती है।

अप्पा : हां, हां, सुहासिनी। अच्छी बात है, सुहासिनी देवी ...

सुहास : (**उनके सीने पर सिर रगड़ती हुई।**) नहीं-नहीं—आप मुझे नन्ही ही कहेंगे। पर यह नाम किसी और को न बताइए, समझे।

अप्पा : नहीं बताऊंगा, पर कौन-सी मजेदार बात हुई सो भी तो बताएगी?

सुहास : बड़ी, बड़ी मजेदार बात हुई। पर पहले मेरी एक बात सुन लीजिए। फिर मैं बताऊंगी।

अप्पा : क्या सुन लूं?

सुहास : बताऊं? पहले मुझे अपने नाटक की वह बड़ी-सी आवाज सुना दीजिए। बड़ा मजा आता है मुझे उसे सुनते।

अप्पा : पर भई, ऊंची आवाज में बात करने के लिए कोई कारण भी तो हो। गालियां दूं तुझे? अभी तो यही बात मुझे फौरन सूझ रही है। दूं गालियां?

सुहास : दीजिए—खूब दीजिए।

अप्पा : देख ले। फिर हमारी गुड़िया कहीं नाराज न हो जाए।

सुहास : नहीं होऊंगी, दीजिए।

अप्पा : तब तो मेरी भी एक शर्त है, पहले तू मुझे स्कूल की बात बताएगी, उसके बाद मैं तुझे अपनी ऊंची आवाज सुनाऊंगा।

सुहास : ना—पहले आप!

अप्पा : नहीं, नहीं, नहीं! पहले तू।

सुहास : अच्छा। बताऊं?

अप्पा : हां।

सुहास : आज एक अतिथि आए थे हमारे स्कूल में। कोई बहुत बड़े आदमी थे। जब मैंने कविता पढ़कर सुनाई तो मुझसे पूछा, तुम्हारा नाम क्या है? मैंने कहा ...

अप्पा : नन्ही।

सुहास : ऊं-हुं, बीच में न बोलिए। मैंने कहा, मेरा नाम है सुहासिनी नंदन बेलवलकर। उन्होंने कहा, बेलवलकर कौन? मैंने बताया, मेरे पिताजी के पिताजी बहुत बड़े नट थे। और इतना कहते ही वह मजा आया, दद्दा वे चट से उठें और बोले, तुम गणपतराव की पोती हो? मैंने कहा, हां, मैं उन्हीं की पोती हूं। और फिर दद्दा, वे बड़ी देर तक मेरी ओर देखते रहे और फिर बोले, भाग्यवान हो तुम, बेटी! गणपतराव जी से मेरा नमस्कार कहना।

अप्पा : पर भवानी, वे थे कौन?

सुहास : कह तो दिया है कि मुझे उनका नाम याद नहीं। पर वे हैं कोई बहुत बड़ आदमी। वे बोले, बचपन में तुम्हारे दादा से मैंने संदेश लिया था। अब भी संभालकर रखा है उसे। उनके चले जाने के बाद सब लड़कियों ने पीठ ठोंक-ठोंक कर मेरे नाक में दम कर दिया। है न मजेदार बात?

अप्पा : वाह! सचमुच बड़ी मजेदार बात है। पर तेरी मास्टरनी भाग जाती तो मुझे अधिक मजा आता।

सुहास : (**क्रोध से**) शि:! फिर वही बात। (**कुछ बात मन में आती है। एकदम उत्साह से**) दद्दा, मुझे भी संदेश दीजिए आप।

अप्पा : मैं दूं संदेश?

सुहास : हां, देना ही पड़ेगा।

अप्पा : भई, मैं कौन हूं संदेश देने वाला? कृष्ण जी प्रभाकर खाडिलकर हूं या राम गणेश गडकरी? संदेश दिया करते हैं नाटककार, छोकरी, नट नहीं। हम तो केवल मजदूर आदमी हैं। इधर का माल उधर पहुंचाने वाले।

सुहास : तो उन्हें कैसे दिया? क्या वे झूठ बोले?

अप्पा : तब मैं गधा था। अब से अधिक बड़ा गधा। आंखों में श्रद्धा लिये जब कोई स्कूल-कालेज के बच्चे आ जाते थे तो मैं घसीट दिया करता था एक भारी-सा सुभाषित। सब चोरी का माल था। कर्ता खाडिलकर का और क्रियापद गडकरी का।

सुहास : मैं नहीं जानती, हां। मुझे संदेश देना ही होगा। लोगों को देते हैं और हमें मना करते हैं।

अप्पा : अरी ओ नकटी, अब मैं लिख नहीं सकता। हाथ सीमेंट के मिक्स्चर की तरह थर-थर कांपने लगता है। क लिखने जाऊंगा और ख लिखा जाएगा, और ङ लिखूंगा तो ढ हो जाएगा और वह उछलकर तुम्हारे सिर पर बैठ जाएगा।

सुहास : तो न लिखिए। केवल बताइए।

अप्पा : केवल बताऊं?

सुहास : जी, नहीं तो मैं कभी भी आपके पास नहीं आऊंगी। और आ भी गई तो बोलूंगी नहीं।

अप्पा : ओ महामाया, ऐसी जान लेने वाली विचित्र धमकियां न दे। तू नहीं आएगी तो गुब्बारे की तरह मैं चट से फूट जाऊंगा। फिर रोती बैठेगी—मेरे दद्दा—मेरे दद्दा कहती!

सुहास : ऊं-हुं। ऐसी बातें नहीं करते, जल्दी बताइए संदेश।

अप्पा : अच्छा सुन। लेकिन संदेश देने के बाद जो मैं मांगू वह देना पड़ेगा। है मंजूर?

सुहास : मंजूर।

अप्पा : वायदा?

सुहास : (**वचन देती हुई**) वायदा!

अप्पा : तो फिर सुन—

स्वर कहता साथ दे
दीप कहता बाति दे
धूप में के वृद्ध को तू
सिर्फ अपना हाथ दे
गगन कहता छांह दे
भूमि कहती नीर दे
अटरिया के वृद्ध को तू
सिर्फ अपना गीत दे
कौआ कहता पंख दे
चिड़िया कहती नीड़ दे
मुझ जैसे दद्दा को तू
एक मीठा प्यार दे।

सुहास : (**हंसती हुई दूर भागती है**) नहीं दूंगी, जाओ। नहीं दूंगी।

अप्पा : (**उठते हुए**) अरी नटखट! दे ... दे ...

सुहास : **(दूर से ही)** हमारी बात कहां मानी आपने? पहले जोर से बोलकर दिखाइए ...

अप्पा : ना, पहले प्यार ...

सुहास : नहीं, पहले आवाज ...

अप्पा : ठहर छोकरी ... **(उसके पीछे दौड़ते हैं। दोनों का एक-दूसरे के पीछे दौड़ना शुरू हो जाता है। दौड़ते-दौड़ते तीव्र स्वर में)** निर्लज्ज, बदमाश— मुझे उल्लू बनाती है ... धोखेबाज ... चोर ...

दोनों का चीखना-चिल्लाना, हंसना, दौड़-धूप चालू है। तभी अकस्मात शारदा आ धमकती है। क्रोध से भरी हुई।

शारदा : **(चिल्लाती है)** खबरदार जो मेरी बेटी को उल्टी-सीधी गालियां दीं।

अप्पा और सुहास अपनी-अपनी जगह काटो तो खून नहीं, की भांति खड़े रहते हैं। एक भयभीत खरगोश की तरह सुहास कोने से मां की ओर ताकती है। अप्पा की नजर घबराई हुई है जैसे कुछ भी पल्ले न पड़ रहा हो।

शारदा : चोर और बदमाश कहने के लिए मेरी बेटी लावारिस नहीं है।

अप्पा : **(अटकते-अटकते)** लेकिन ... बहूरानी ... मैं ...

शारदा : सौ बार कह चुकी हूं आपसे कि बोलना हो तो ठीक से बोला कीजिए। आठों पहर शोर-गुल और गाली-गलौज न किया कीजिए यहां।

सुहास : **(रुआंसी होकर)** मां, नहीं ... नहीं मां। वे मुझे गालियां नहीं दे रहे थे। मैंने ही कहा था उनसे ऊंचे स्वर में बोलने के लिए।

शारदा : चुप रह। तू भी उनके पीछे बिगड़ती जा रही है। कितनी बार तुझसे कहा है, इस कमरे में न आया कर। क्यों आयी यहां मरने के लिए?

सुहास : यहां न आऊं?

शारदा : नहीं! कान खोलकर सुन ले— दोबारा इस कमरे में पांव रखा तो दाग दूंगी पैर। कहती है, ऊंची आवाज में बोलने के लिए कहा। वह आवाज सुन-सुन कर मेरा सिर फटा जा रहा है। डाक्टर ने शांति से आराम करने के लिए कहा है। यह है शांति और आराम! घर में भी वनवास, बात-बात पर सब पर गालियों की बौछार, जरा मन के विरुद्ध हो जाए या देर हो जाए तो चिल्ला-चिल्ला कर कोहराम और समय-असमय नाटक के भाषणों से कान पक गए। न शिष्टाचार है, न सौजन्य और न सभ्यता। यह घर है या नाटक मंडली के आवारा लोगों की धर्मशाला। जरा भी नहीं सोचते कि आखिर हम किस बस्ती में रहते हैं, पास-पड़ोस में कौन रहते हैं, हमारी इज्जत क्या है। अब यह सब नहीं सहा जाता मुझसे। घर आने पर उनसे कहती हूं, या मुझे इस घर में रखें या इन्हें।

सुहास : (**रोती हुई**) मां, डांटो, चाहो तो मुझे मारो, पर मेरे दद्दा, मेरे दद्दा पर नाराज न हो, मां!

शारदा : बड़ी आई है मुझे सिखाने वाली! तुझे भी जान-बूझकर मुझसे तोड़ लिया है इन्होंने।

अप्पा : (**क्षीणता से**) तुमसे तोड़ लिया है? मैंने ...

शारदा : हां, आपने। मैं सब हथकंडे समझती हूं। चल री— (**सुहास को झटके से खींचती है**) पैर तो रख अब इस कमरे में ...

शारदा सुहास को ले जाती है। खींचती, घसीटती। अंदर जाते समय वह 'दद्दा, दद्दा,' कहकर चिल्लाती है। रोशनी धीमी होने लगती है।

सुहास की चीखों से विभिन्न स्वरों में तरंगें उठती हैं। और उस कौलाहल में से 'दद्दा ... मुझे बचाइए—दद्दा, मुझे बचाइए—चाचा—मुझे बचाइए ...' —तीव्र आर्त शब्द चारों ओर से टकराने लगते हैं। वह आवाज सहन न कर पाने के कारण अप्पा अपने कानों पर हाथ रख लेते हैं और छटपटाते, गिरते-संभलते कुर्सी पर जाकर बैठ जाते हैं। सारी आवाज एकदम बंद हो जाती है। कुर्सी पर पड़ी रोशनी के अतिरिक्त अंधेरा घनीभूत हो जाता है। क्षण-भर बाद अप्पा एकदम दरवाजे की ओर देखते हैं ...

अप्पा : अच्छा हुआ जो उन्होंने उस बैठक का दरवाजा बंद कर दिया। नारायणराव के पेट में वह सुमेरसिंह की तलवार धंसी हुई देखते ही मेरी आंखों के सामने मेरे सारे पूर्वज खड़े हो गए। वह दरवाजा बंद हुआ, हत्यारों की सृष्टि आंखों से ओझल हुई और तत्काल मेरा मन दृढ़ हो गया। वह शायद मर गई होगी। तो फिर ... दद्दा— दद्दा का शब्द कहां से सुनाई पड़ रहा है? मेरा हृदय कठोर हो गया है, मेरी आंखों की करुणा के स्रोत की आखिरी बूंद सूख चुकी है। दद्दा— दद्दा— उफ, इस ओर से भी वही शब्द सुनाई दे रहा है। मेरे सामने से भी वही आवाज क्यों सुनाई दे रही है? क्या स्वर्ग के देवता नारायणराव के रूप में चाचा, चाचा कहकर मुझे पुकार रहे हैं? इस पृथ्वी के गर्भ से वही शब्द क्यों सुनाई दे रहा है? अजी, कोई डोंडी पिटवाइए कि गणपतराव बेलवलकर मर गया। उसका मातम मनाइए। उसकी अंत्येष्टि का जय-जयकार इस घर में, सारे पूना शहर में, सारे महाराष्ट्र में इतने जोर से कीजिए कि उसके मृत कान बंद हो जाएं, और दद्दा-दद्दा शब्द सुनने की उनमें शक्ति ही न रहे। (**एकदम धीमे स्वर में**) ... मुझसे हिला नहीं जाता। मुझे उसके पास ले चलो।

मोहना, मेरे कंधे से कंधा मिलाकर लड़ने की अपनी जिद आखिर तुमने पूरी कर ही दी, क्यों! ... मोहना, कैसा यह साहस ...!

आंखें मूंदकर कुर्सी की पीठ पर गर्दन लटका देते हैं। धीमा संगीत। धीरे-धीरे प्रकाश बढ़ता है और पूर्ववत पूर्ण हो जाता है। उस प्रकाश में अप्पा कुर्सी पर आंखें बंद करके बैठे हुए, एक कोने में नंदा और शारदा तथा पिछली दीवार के पास कावेरी, स्थिर दृष्टि से सामने देखती हुई, खड़ी दिखाई देती है। उसके बाद ...

नंदा : अप्पा, सुन रहे हैं आप, मैं क्या कह रहा हूं?

अप्पा : (**आंखे खोलकर, धीमे स्वर में**) हां, हां सुन रहा हूं।

शारदा : अभी पांच मिनट पहले उल्टी-सीधी गालियां दे रहे थे, बेबी को। हमारे आते ही आंखें मूंद लीं। हमेशा का स्वांग है यह।

अप्पा : नहीं, नहीं, मैं सुन रहा हूं, बहूरानी, क्या कहना चाहते हो तुम लोग?

नंदा : (**खखारकर, साहस बटोरकर**) अप्पा, हम यही कहना चाहते हैं कि मनुष्य की सहनशीलता की भी एक सीमा होती है।

अप्पा : हां, होती है।

नंदा : आप नहीं जानते कि यह सब कहते मुझे कितना दुख हो रहा है, अप्पा!

अप्पा : जानता हूं।

नंदा : बारह साल पहले हम इस फ्लैट में रहने के लिए आए, अप्पा! इन बारह वर्षों का प्रत्येक दिन इस बात की गवाही देगा कि आपकी देख-भाल करने का हमने जी-जान से प्रयत्न किया है। शायद हमसे भी भूल हुई हो, पर आपकी देख-भाल करना, आपका मिजाज संभालना, यह भूलकर कि अब हम बड़े हो गए हैं, बचपन की भावना से ही अपने घर में रहना आदि तपस्या हम बारह वर्षों से करते आ रहे हैं। पर आखिर हमने यही अनुभव किया है कि गोल सूराख में चौकोर खूंटी नहीं बैठायी जा सकती। बैठ ही नहीं सकती।

अप्पा : ठीक है ... सरकार, मुझे जरा पानी दो।

नंदा : मैं देता हूं।

अप्पा : नहीं, सरकार दे देंगी।

कावेरी कठपुतली की तरह कोने में रखी सुराही से गिलास भर पानी लेती है ओर अप्पा को देती है।

शारदा : यह और सुन लो। चार जनों को ऐसा दिखाएंगे कि बच्चे इनका ध्यान ही नहीं रखते।

अप्पा : (**थोड़ा मुस्कराकर**) ऐसी बात नहीं, बहूरानी! चार जने तो दूर रहे,

हिसाब तो अब केवल दो का बचा है। प्याले खाली होने के पहले एक-दूसरे को पी लेने का यह प्रयत्न है। पर यह बात तुम लोग नहीं समझ सकते। (**गिलास कावेरी को पकड़ाते हैं**)। ठीक है, नंदा, गोल छेद में चौकोर खूंटी नहीं बैठ सकती। मैं स्वीकार करता हूं। इसके लिए एक ही उपाय है ...

नंदा : नहीं, अप्पा, मेरा मतलब यह नहीं है। अपनी जिम्मेदारी से मैंने कभी भी बचने का प्रयत्न नहीं किया और कभी करूंगा भी नहीं ...

अप्पा : (**भड़ककर**) कलोरोफार्म काफी हो गया, अब आपरेशन कर डालो। (**धीमे स्वर में**) कहना क्या है तुम्हारा?

नंदा : मुझे कुछ भी नहीं कहना है। जो हुआ है वह मैं अब भी पूरी तरह नहीं जानता ...

अप्पा : (**आंखें गड़ाकर देखते हुए**) आपका तुतलाना कहां है? हाथ में पकड़ा हुआ झुनझुना कहां है? आपको तो कुछ भी समझ नहीं। नंदाजी राव एम. काम., तेजपाल कंपनी के मैनेजर, आप अपना पालना छोड़कर यों रेंगते-रेंगते ही यहां आ रहे हैं न?

नंदा : अप्पा, मेरी पत्नी ने आपका कुछ अपमान किया है तो ... तो ...

अप्पा : तो तुम कुछ भी नहीं कर सकते। अरे, तुम्हारे जैसे पति हैं बीवियों की टेंट में लगे रूमाल। लेवेंडर लगे रूमाल। तुम क्या कर सकते हो? उसके माथे का पसीना पोंछो! रूमाल ... (**चिल्लाते हैं**) रूमाल। सरकार, मामूली रूमाल नहीं है वह। मिस्र देश के एक तंत्रिक ने बनाया था उसे। खुद अपने हाथ से। मेरी मां ने मरते समय वह मुझे दिया और बताया ...

अप्पा बोलते-बोलते पीछे कुर्सी पर टिक जाते हैं। कावेरी कुर्सी के पीछे आकर खड़ी हो जाती है।

कावेरी : नंदा ...!

नंदा : तुम भी उन्हीं का साथ दे रही हो, मां! मेरी पत्नी ने शायद वह किया हो जो उसे नहीं करना चाहिए था। जो नहीं कहना था वह कह दिया हो। पर आपको तो समझना चाहिए कि मनुष्य की सहनशीलता की भी कोई सीमा होती है। आपका चाहे दोष न हो, आपकी उम्र का हो, पर घर में आप अपनी सीमाओं का पालन नहीं करते। आज साफ-साफ कहना पड़ रहा है।

अप्पा : मेरी सीमा?

नंदा : जी, आपकी सीमा। आपका अधिकार चाहे जितना ही बड़ा क्यों न हो, पर हम जहां रहते हैं वह घर है; पढ़े-लिखे सभ्य लोगों की एक बस्ती

का घर है— यह आपको ध्यान में रखना चाहिए।

अप्पा : (**क्षीण स्वर में**) क्या किया है मैंने? तुम्हारी सभ्यता और संस्कृति पर लांछन लगाने वाली ऐसी कौन-सी बात की है मैंने?

शारदा : मैं बताती हूं क्या किया है आपने।

नंदा : शरू, तुम जरा चुप रहो।

शारदा : क्यों चुप रहूं मैं? कमर में लटका रूमाल कहकर तुम्हारा अपमान कर रहे हैं। तुम सहन कर सकते हो? यही दिन-भर होता रहता है। सीधी-सादी बात को कभी सीधी समझते ही नहीं। दिन-रात किसी-न-किसी की गर्दन पर छुरी चलती रहती है। यह सब हम कब तक और क्यों सहन करते रहें? केवल इसलिए कि यह बीस हजार का फ्लैट आपने हमें दिया है? इससे तो किसी झोंपड़ी में सुख से रह लूंगी मैं। (**सिसकने लगती है**)।

नंदा : शरू ...! (**पीठ पर हाथ रखता है**)।

शारदा : अब यह कष्ट मुझसे सहन नहीं होता। आपको कष्ट होगा इसलिए चुपचाप सहन कर रही हूं यह सब, पिछले दस वर्षों से। सुख के कितने सपने देखते मैंने इस घर में कदम रखा था। पर प्रत्येक दिन कांटों पर घसीटा-सा गुजर रहा है। मन को आजादी नहीं, घर में शांति नहीं और गृहस्थी को आकार नहीं। अपनी इच्छानुसार कुछ भी करना चाहो, इनका बखेड़ा खड़ा हो ही जाता है। इनके बर्ताव के कारण आए-गए मेहमानों का भी आतिथ्य नहीं हो पाता। बड़े लोग मिलने आते हैं और आकर पछताते हैं। सभ्य लोग हमारे घर से घबराने लगे हैं। क्यों बसाया यह घर? इनके खूसट बुढ़ापे की भट्टी में हमारे जीवन का एक-एक दिन भस्म करने के लिए? सौ बार कह चुकी हूं कि इस कमरे से बाहर न निकला कीजिए। पर कोई-न-कोई कारण निकालकर सारे घर में घूमते रहते हैं और सारा घर अस्त-व्यस्त कर देते हैं। यह क्या नाटकी आवाराओं की धर्मशाला है? इनके इस व्यवहार और बातचीत से नौकर भी नहीं टिक पाते। कौन करे यह सब काम? हां, सासू जी करती हैं काम, पर अपने अटपटे ढंग से एक काम में से दस नये काम पैदा कर देती हैं। सुबह से शाम तक गुलाम की तरह रहो, सबकी सेवा करो और पटक-झपट, गाली-गलौज सुनते रहो। अपनी हारी-बीमारी चुपचाप सहन करते रहो। क्या उपयोग आपके वेतन और ऐश्वर्य का? सारा जीवन कंटीला हो रहा है। आप पर नहीं बीतती, आप बाहर रहते हैं। सात जन्मों का बदला ले रहे हैं। मेरी अपनी बेटी को भी मुझसे दूर खींचे जा रहे हैं। इसे अपने गंवारपन और अटपटेपन की दीक्षा देकर उसका

जीवन बर्बाद करने पर उतारू हैं। (**रोने लगती है**)।

नंदा : यों क्रोध न करो, शरू! तुम्हारी तबियत ठीक नहीं है।

शारदा : मरूंगी तो छुट्टी पा जाऊंगी इस परेशानी से।

नंदा : (**दृढ़ता से**) अप्पा, मां, मैं चाहता हूं कि आप इस घर में सुख से रहें। यदि गुस्से में शारदा ने कुछ उल्टा-सीधा कह दिया हो तो उसके लिए मैं माफी मांगता हूं। पर एक बात साफ-साफ कहे देता हूं। शारदा इस घर की मालकिन है। आज तक जो हुआ सो हुआ। पर इसके बाद आपके बारे में उसकी कोई भी शिकायत मैं नहीं सुनूंगा। मैं जानता हूं, हमारी दुनिया अलग-अलग है। हम नौजवान हैं, आप बूढ़े हो गए हैं। पुत्र होने के नाते मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूं। पर आपको यह अधिकार नहीं कि आप अपने कीचड़ में सने पैरों से हमारे गलीचे को गंदा करें। आपको निभा लेना चाहिए। मैं सौ बार आपके पैर छुऊंगा, अप्पा, पर अपनी गृहस्थी का और शारदा का बलिदान मैं आपके चरणों पर नहीं करूंगा। (**रुकता है, फिर घड़ी देखता है**)। आसाराम ... आसाराम ...!

नौकर आता है।

आसाराम, ड्राइवर से गाड़ी तैयार रखने के लिए कहो, हमें तेजपाल साहब के यहां जाना है। शरू, हमें दस मिनट में निकल पड़ना है। तुम तैयार हो जाओ। मैं उन्हें फोन करता हूं। (**जाता है**)।

शारदा : मैं आई ही समझो। आसाराम, इनके सामने ही तुम्हें बताए देती हूं कि हमारे जाने के बाद सुहास को इस कमरे में न फटकने देना। जिद करे तो दरवाजे का कुंडा लगा लेना। इसमें भूल नहीं होनी चाहिए।

नौकर : जी, हां।

शारदा अंदर जाती है। आसाराम भी जमीन पर बिखरे कुछ कागज के टुकड़े उठाता है और जाता है। रोशनी धीमी होने लगती है।

सुन्न होकर खड़ी कावेरी जब अंदर जाने लगती है तब स्टेज पर अंधेरा हो जाता है। केवल अप्पा के चेहरे पर रोशनी बनी हुई है।

पार्श्व संगीत।

उसमें से शब्द सुनाई पड़ते हैं : 'हम नौजवान हैं, हम नौजवान हैं।' अप्पा इस तरह गर्दन उठाते हैं मानो जाग उठे हों और उन शब्दों की दिशा में आंखें गड़ाकर देखते हैं।

अप्पा : हां ... हां ... हां
तुम नौजवान हो

यानी कर सकते हो केवल संभोग
मनुष्य की मादा से।
पर नौजवान हैं कौवे
और नौजवान हैं गीध
नौजवान हैं रास्ते के गधे
और सूअर भी
नरक के सूक्ष्म कीड़े भी
मैथुन करते हैं अपनी मादाओं से
और कीड़ों की जाति बढ़ाकर
मर जाते हैं कीड़ों की तरह।
इस देह-भोग के अंधे दलदल से
उठकर खड़ा है एक व्यक्ति
हम सब का बाप,
उसने चीर डाला अपना शरीर
और आकाश के सितारों पर
अपना रक्त छिड़कते हुए
चिल्ला उठा : कोई है?
दिशाएं बोल उठीं : मैं हूं
और मुझमें भी तुम्हीं हो।
इस आश्वासन का सोमरस पीकर
सूरज के चक्के पर काता उसने
एक नया विश्व
जिसमें बंदर बन गए मनुष्य,
अक्षरों के हुए मंत्र, स्वरों से संगीत
और पाशविक जीवन की चट्टान पर
बन गया एक विराट् सुंदर देवालय
जिसमें मनुष्य ने पाया ईश्वर
और अनिकेतन ईश्वर ने पाया घर।
इस बाप को बेशक भूल जाओ,
पर उस पिता को भुलाया तो
पहाड़ों की दरारों में दुबककर बैठे गीध
खा जाएंगे निमिषार्ध में
केवल तुम्हीं को नहीं
सारी मानव जाति को।
मानव जाति ...

पार्श्व संगीत, दुबारा पहले-सी रोशनी। कावेरी एक ट्रंक और बिस्तर लिए अप्पा की कुर्सी के पास खड़ी है।

कावेरी : चलिए न!

अप्पा : चलूं? कहां?

कावेरी : इस घर से बाहर।

अप्पा : यह घर छोड़कर?

कावेरी : हां।

अप्पा : हम कहां जाएंगे, सरकार? मैं हूं यों शरीर से मुहताज।

कावेरी : मुझ पर भरोसा नहीं?

अप्पा : तुम्हारे भरोसे के सिवा और बचा ही क्या है मेरे पास? पर कहां ले जाना चाहती हो मुझे?

कावेरी : हम नलू के यहां जाएंगे, राहीनगर। सुबह की गाड़ी से।

अप्पा : और आज की रात?

कावेरी : स्टेशन पर काटेंगे। न हो तो रास्ते में कहीं पेड़ के नीचे गुजार देंगे। पर यहां नहीं। अपना अपमान आप चाहें तो सह सकते हैं, पर मैं सहन नहीं करूंगी।

अप्पा : लेकिन, सरकार, हम हैं फक्कड़। जेब में दमड़ी भी नहीं।

कावेरी : परसों नंदा ने जब आपको पैसे देने से इंकार कर दिया था तभी मैंने अपना चंद्रहार बेच दिया था। एक परिचित आदमी के द्वारा।

अप्पा : कौन-सा चंद्रहार?

कावेरी : सम्मान-समारोह के दिन जो आपने मुझे दिया था। जिस दिन आपने बच्चों को सब कुछ दे डाला और मुझे चंद्रहार दिया।

अप्पा : नलू— मेरी लाडली बिटिया— लेकिन ...

कावेरी : वह ऐसी नहीं है। मुझे विश्वास है। पिछले पत्र में उसने घिघियाकर लिखा था, मैं उस दिन का इंतजार कर रही हूं जिस दिन तुम दोनों के पैर मेरे बंगले में पड़ेंगे।

अप्पा : हमारे बच्चे अच्छे हैं, सरकार! बुरा है हमारा बुढ़ापा।

कावेरी : होगा, पीछे जाकर हम तरुण नहीं हो सकते, और आगे जाकर मर नहीं सकते ... कोट यहीं रहने दीजिए। यह टोपी लीजिए और शाल भी कंधे पर रहने दीजिए ...

कावेरी टोपी और शाल देती है। अप्पा छड़ी लेकर उठते हैं।

अप्पा : नन्ही को ... एक बार नन्ही को देखने को जी करता है।

कावेरी : हमें मनाही उससे मिलने की। आसाराम ने बंद कर रखा है उसे। चलिए,

किसी के आने के पहले हमें चल देना चाहिए।

अप्पा : अच्छी बात है। मेरा बहुत-बहुत आशीर्वाद तुझे, बेटी! नंदा, बहूरानी तुम्हें भी, सब लोग सुखी रहो ... सुखी रहो ...!

कावेरी सामान उठाए आगे चल पड़ती है। अप्पा लकड़ी टेकते-टेकते जाते हैं। दरवाजे के पास पहुंचकर मुड़कर पीछे देखते हैं और बड़बड़ाते हैं, 'नन्ही ... जाता हूं, समझी ... टा, टा, नन्ही।' दोनों चले जाते हैं।

पार्श्व संगीत ... रोशनी कम होती है। भीतर से सुहास की चीखें सुनाई पड़ती हैं : 'नहीं, नहीं आसाराम, खबरदार मुझे रोका तो ...'

सुहास : **(छटपटाती हुई दौड़कर खाली कमरे में आती है, चीखती है ...)** मुझे दद्दा से मिलना है। दद्दा ... दद्दा, कहां गए आप? मैं आपकी नन्हीं आपको पुकार रही हूं। दद्दा ...

उल्टी-सीधी दौड़ने लगती है। आखिर में खिड़की के सींखचों को पकड़कर पुकारती है। शब्द सिसकियों में विलीन हो जाते हैं।

पर्दा

दूसरा अंक

पहला दृश्य

एक ऐसा छोटा-सा रेलवे-स्टेशन जहां आमद-रफ्त बहुत कम है। दोपहर का समय।

तीसरे दर्जे का प्रतीक्षालय। टिकटघर। सामने पत्थर की दीवार, दीवार में एक खिड़की और दाहिने कोने में प्लेटफार्म पर जाने के लिए मेहराब, खिड़की के पास वाली पत्थर की बेंच पर कावेरी बैठी है। खिड़की से बाहर देखने का प्रयत्न करती हुई। उसके पास में एक पुराने टिन का संदूक, बिस्तर और पानी का लोटा रखा हुआ है।

अप्पा साहब मेहराब से आते हैं। फिर एक बार बाहर झांककर देखते हैं। अंदर आकर ...

अप्पा : चली गई।

कावेरी : कहां की गाड़ी थी?

अप्पा : दिल्ली जाने वाली, सोलह अप।

कावेरी : सोलह क्या?

अप्पा : सोलह अप। उस कुली ने बताया। तब सोलह अप ही होनी चाहिए। (**घड़ी देखते हैं**) तीन तैंतीस पर आती है। अब चार बज चुके हैं। यानी लगभग आधा घंटा लेट। जिस गाड़ी से हम लोग आए वह भी पंद्रह मिनट लेट थी। टाईम-टेबल तो निरे उपन्यास बन गए हैं। लेकिन (**बेंच पर बैठते हैं**) कोई आया तो नहीं?

कावेरी : न कोई आया, न गया। पर इस तरह प्लेटफार्म पर जाकर गाड़ियां देखते रहने की क्या जरूरत थी? रात को पैर दुखने लगें तो मैं नहीं दबाऊंगी, बताए देती हूं।

अप्पा : सरकार, स्टेशन पर इस तरह रुकना पड़े तो गाड़ियां देखने में मजा आता है। अभी जाने वाली वह सोलह या सत्रह अप कितनी अजीब छंटी हुई गाड़ी थी। कायदे के अनुसार इस भिखमंगे स्टेशन पर नहीं ठहरती वह।

पर भिखारियों का भी अपना कायदा होता है। इस स्टेशन ने लाल सिगनल लहूलुहान हाथ की तरह आगे बढ़ाया और वह रुक गई। भनभनाई, तमतमाई, चीखी, चिल्लाई— पर आखिर खड़ी हो गई, खट-से ब्रेक लगाकर— मुझे लगता है सरकार कोई आएगा ही नहीं। हम यों ही इंतजार करते बैठे हैं।

कावेरी : यह कैसे हो सकता है? हमने दादर स्टेशन से तार जो भेजा था।

अप्पा : पूरी गाड़ी प्रथम श्रेणी के हवाबंद डिब्बों से भरी पड़ी थी। कुएं से निकली हुई नागिन की तरह चमकने वाली। सिगनल होते ही उसने अपने हृदय का सारा काला गुब्बार आसमान में छोड़ दिया और कानों को बहरा करने वाली एक चीख मारकर घड़घड़ाती फिर से दौड़ने लगी। क्या कहा तुमने?

कावेरी : मैंने कहा, हमने तार जो भेजा था ...

अप्पा : अजी, तार व्यक्ति के घर तक जाता है, उसके मन तक नहीं जाता। घर के दरवाजे खुले हैं और मन के बंद— चाहे सौ तार करो, उनसे फायदा?

कावेरी : ऐसा नहीं हो सकता। जरूर कुछ गड़बड़ हुई होगी— आप पानी पीएंगे न? बेकार में धूप में खड़े तड़पते रहे। (**उठती है और लोटे का पानी देती है**) रात को सिर में दर्द होने लगे तो ...

अप्पा : (**हंसते हुए**) दबाओगी नहीं। यह नहीं करोगी, वह नहीं करोगी और किए बिना रहोगी नहीं। संसार के आरंभ से स्त्रियों का यही तकिया-कलाम रहा है। (**पानी पीते हैं**) गड़बड़ कुछ नहीं, सरकार ...

कावेरी : पर नलू ने कितना घिघियाकर लिखा था पिछले सत्र में ... अपने यहां आने के लिए। वह क्या झूठ था।

अप्पा : अपनी बच्ची झूठ नहीं लिखेगी, सरकार, पर दुनिया में झूठ और सच सच्चा नहीं हुआ करता, सच्ची होती है केवल सुविधा और असुविधा। बस, इतना ही। सबसे अच्छे मेहमान तो वे होते हैं जो कभी आते ही नहीं। आने के लिए कहते हैं, पर आते नहीं। हम आने के लिए चल पड़े और मजा जाता रहा।

कावेरी : (**लोटा रखती है**) आप यहां बैठिए। मैं बाहर जाकर फिर से देख आती हूं। शायद बिटिया को समय न मिला हो। पर घर में इतने सारे नौकर-चाकर हैं। कोई-न-कोई जरूर आएगा, और सुनिए, प्लेटफार्म पर धूप में न जाइए। सामान के पास बैठे रहिए।

अप्पा : हुक्म की तामील होगी, सरकार! सरकार, सिर पर पल्ला ले लीजिए। धूप से सिर दुखने लगे तो ...

कावेरी : रहने भी दीजिए।

सिर पर पल्ला लेकर बाहर जाने लगती है।

अप्पा : और सरकार ...

कावेरी : अब क्या है?

अप्पा : आपके परसों के फरमान को भूलकर जरा एक सिगरेट पी लेता हूं। है इजाजत?

कावेरी : पी लीजिए, पर सिर्फ एक।

अप्पा : हां ... हां ... एक बार एक ही।

कावेरी जाती है। अप्पा जेब से पैकिट निकालते हैं और सिगरेट सुलगाते हैं। सिगरेट के धुएं के साथ रोशनी धीमी होने लगती है और अप्पा तथा पिछली खिड़की को छोड़कर सर्वत्र अंधकार हो जाता है। खिड़की में सुहास का चेहरा प्रकट होता है। वह हंसती हुई हाथ आगे बढ़ाती है और अप्पा के कंधे को स्पर्श करती है। अप्पा एकदम चौंककर पीछे मुड़ते हैं और हाथ मटकाकर चिल्लाते हैं।

अप्पा : बदमाश! शैतान! घपलेबाज भवानी! फिर मुझसे मजाक कर रही है? एक बार उल्लू बनाकर तसल्ली नहीं हुई? ... बिटिया, तुझे शर्म नहीं आती दादा की जान से खेलते? क्यों आकर खड़ी थी उस सत्रह अप की खिड़की में? एक तो आकर खड़ी थी और ऊपर से हाथ हिला-हिला कर मुझे बुलाने लगी। और एक मैं हूं कि गधे की तरह दौड़ने लगा, तेरा दद्दा सत्रह अप के पहियों के नीचे आ जाता तो अच्छा होता, क्यों? अच्छा ठहर, भवानी इतना न रूठ, अब आ ही गई है तो ये चाकलेट की गोलियां लेती जा। तुझे अच्छी लगती हैं, मैं भूला नहीं हूं। (**कोट की जेबें टटोलने लगते हैं**) एक पूरा पैकिट है—कहां गया?

जेबें टटोल ही रहे हैं कि पहले जैसी रोशनी होती है। खिड़की से दिखाई देने वाला नन्ही का चेहरा अदृश्य हो जाता है और उस जगह एक टिकट कलेक्टर का चेहरा दिखाई देने लगता है। वह हाथ बढ़ाता है।

अप्पा : मुझे लगता है, पैकिट खो गया।

टि. क. : मैं टिकट मांग रहा हूं, दद्दा, पैकिट नहीं।

अप्पा : टिकट?—हां—हां, आप टिकट कलेक्टर हैं न? यानी चाकलेट से आपका काम नहीं चल सकता?

टि. क. : टिकट के सिवा और किसी भी चीज से हमारा काम नहीं चलता, और चाकलेट से तो बिल्कुल नहीं।

अप्पा : (**जेबें टटोलकर**) हां—हां—पर शायद खो गया है। —नहीं—मिल

गया—यह रहा एक और यह दूसरा (**टिकट देते हैं**)।

टि. क. : (**टिकट देखते हुए**) तो आप आए हैं। मैं समझा, आप जा रहे हैं।

अप्पा : जाना भी है। पर अभी उसका टिकट नहीं कटाया है। इतनी भीड़ है खिड़की पर।

एक कुली : (**खिड़की के पास आकर**) यह वह बुढ़वा है, साहेब! हमसे पहले पूछत रहा कि कौन गाड़ी जाति अहै। हम कहा, सत्तरा अप अहै। ई गाड़ी दिल्ली का जाय। बुढ़वा गाड़ी को देखत रहा और गाड़ी जब चले लाग तब एक लौंडिया का देख के यहो दौरे लागीन गाड़ी के साथै-साथै। हतौ बड़ा अच्छा भवा कि हम दौड़ के बुढ़ोऊ का पकड़ लेहन, नाहीं तबवए गाड़ी तरै आय जाते। तनिक इनका डाटा तब।

टि. क. : क्यों बाबा, कोई बाल-बच्चे नहीं हैं?

अप्पा : हैं। सब लोग हैं।

टि. क. : तो फिर इस तरह जान देने पर क्यों आमादा हैं? गाड़ी के साथ क्यों दौड़ पड़े?

अप्पा : हां—हां ... कुछ गलतफहमी हो गई थी मुझे। हमारी नन्ही है न? अजी वही नंदा की छोकरी—खैर छोड़िए, आप क्या जानें। हां, इंस्पेक्टर साहब, वह क्या नाम है उसका—वह बांध वाला शहर कितनी दूर है यहां से?

टि. क. : राहीनगर?

अप्पा : हां, वही। मेरी लड़की है वहां, यानी दामाद। भला-सा नाम है उनका। हमेशा भूल जाता हूं—कुछ-कुछ सर्कस वालों का-सा नाम है। देवल छत्रे ...

टि. क : कार्लेकर? सुधाकर कार्लेकर?

अप्पा : वही—हमारा दामाद है।

टि. क. : वे तो बहुत बड़े इंजीनियर हैं। माफ कीजिए मुझे, दद्दा! पर उन्होंने गाड़ी क्यों नहीं भेजी? राहीनगर यहां से बारह-तेरह मील होगा। बस भी कुछ देर पहले चली गई। आप उसी से क्यों नहीं चले गए?

अप्पा : हम इंतजार करते रहे।

टि. क. : अच्छी बात है, आप यहीं बैठिए, दद्दा! मैं राहीनगर आफिस में फोन किए देता हूं। कुछ-न-कुछ गड़बड़ जरूर हो गई है।

कावेरी और विठोबा अंदर आते हैं।

विठोबा : **गड़बड़ भी कैसी? भयंकर गड़बड़।** 'भाव बंधन' नाटक में वर्णित **पेशवाई के अंतिम समय में जितनी** गड़बड़ त्र्यंबक जी डेंगले ने की उससे **भी अधिक आज एक तांगे** वाले और उसके घोड़े ने की। अप्पा साहब

नमस्कार करता हूं। (**पैर छूता है**) मैं हूं विठोबा।

अप्पा : शतायुषी हो। हमसे इंतजार करवाकर तुमने अपना नाम सार्थक किया, विठोबा।

टि. क. : विठोबा, आप कार्लेकर साहब के यहां से आए हैं न?

विठोबा : जी, साहब!

टि. क. : ठीक है। संभालकर ले जाइए इन्हें। अच्छा दद्दा, नमस्कार!

अप्पा : नमस्कार (**टिकट कलेक्टर जाता है**)। सरकार, यह भक्तवत्सल पंढरीनाथ आखिर मिला कहां?

कावेरी : होटल के पास चाय पीता खड़ा था।

विठोबा : साहब, मालकिन को आज साहब के साथ आफिस जाना पड़ा, कोई विदेशी साहब बांध का काम देखने आए हैं। इसीलिए मालकिन ने जीप लेकर मुझे स्टेशन आने के लिए कहा। पर ऐन मौके पर जीप खराब हो गई तो मैंने एक तांगा कर लिया। चलने में उसने पंद्रह मिनट देर कर दी। एक मील चलने के बाद एक पहिया निकलने लगा। उसे ठीक करके आगे बढ़े तो घोड़े ने सत्याग्रह कर दिया। आधा घंटा बीत गया। मन बेचैन हो उठा। लगा जैसे चींटी पहाड़ निगल गई हो। पर सोचा, नहीं—ऐसा कोई भी सिंहगढ़ नहीं है जिस पर गोह फेंकने के लिए द्रोणगिरि का कगार न हो। यह द्रोणगिरि एक बैलगाड़ी के रूप में सामने आया। गाड़ी में बैठा और यहां तक चला आया। गाड़ी वाले को चाय पिला रहा था, साहब!

अप्पा : शाबाश! महासागर के अस्मानी सुलतानी से संघर्ष करने वाला कोलंबस भी तुम्हारे सामने शर्मिंदा होगा। पर बहादुर शेर, मुझे यह बताओ, तुम कौन-सी नाटक कंपनी में थे?

विठोबा : (**नमस्कार करता हुआ**) नट ही नट को पहचानता है। सबसे पहले मैं महाराष्ट्र कंपनी में था, साहब!

अप्पा : किस विभाग में?

विठोबा : था तो रसोई विभाग में, पर कभी-कभी नाटकों में भी काम किया करता था। उसके बाद बलवंत कंपनी में था। और अंत में जब कंपनियां बंद हो गईं तो मैं श्री कपालेश्वर कंपनी में हीरो का काम कर रहा था। फिलहाल राहीनगर के साहब लोग 'हेमलेट' नाटक खेलने वाले हैं—प्रतियोगिता के लिए। उसमें मैं भूत का, यानी हेमलेट के मृत पिता का काम कर रहा हूं।

अप्पा : वाह! कास्टिंग तो बड़ा अच्छा हुआ, पर हे भूत महाशय, अब हम घर कैसे जाने वाले हैं? यहां की सारी संचार-व्यवस्था ही बिगड़ी जान पड़ती

है। (**बाहर गाड़ी का हार्न बजता है**)। नहीं कहने के लिए अभी तक एक वाहन शेष है। (**हार्न की आवाज**)।

विठोबा : यह— यह— अपनी ही गाड़ी की आवाज है। साहब-मालकिन— कोई-न-कोई आया जान पड़ता है। मैं देखता हूं।

बाहर जाने लगता है। तभी नलू और सुधाकर जल्दी से अंदर आते हैं। अप्पा और कावेरी उठकर आगे बढ़ते हैं। नलू लगभग दौड़ती हुई आकर कावेरी से लिपट जाती है।

नलू : मां! (**फिर अप्पा की ओर घूमकर**) अप्पा— एक्सक्यूज मी—

झुककर नमस्कार करती है।

अप्पा : ठीक है— अरी चिड़िया का बच्चा घोंसले में घुसकर पहले चिड़िया अम्मा से ही मिलता है। और फिर उसके बाद चिड़िया बब्बा से— सुखी रहो, बेटी— नलू, ऐसी दुबली क्यों हो रही हो?

नलू : नहीं तो (**आंचल से आंखें पोंछती है**)।

अप्पा : तू बीमार तो नहीं थी, बेटी?

नलू : नहीं, अप्पा, यह हम दोनों के बीच की बात है, (**सुधाकर से**) सुना आपने, बताइएगा नहीं, समझे। अप्पा मुझे मूर्ख समझेंगे।

अप्पा : नलू, कंपनी के घर की एक चारपाई पर आंखें खोलकर जब पहली बार तुमने मेरी ओर देखा तभी मैं समझ गया था, अब तो पुरानी बात हो गई वह— दामाद जी, आप ही दामादजी हैं न? पांच-छह वर्षों से नहीं देखा।

सुधाकर : जी अप्पा साहब! (**नमस्कार करता है**)।

अप्पा : अरे भई, लोगों के सामने मेरा यों तमाशा न बनाइए। ... पर हुआ क्या मेरी बकरी को?

सुधाकर : आपकी बकरी आजकल डाइटिंग कर रही है, अप्पा साहब! पत्ते खाकर रहती है, कहूं तो अनुचित न होगा।

नलू : अप्पा, ये सब बातें यहां किसलिए? विठोबा, सारा सामान गाड़ी में ले जाकर रखो। गाड़ी जरा पेट्रोल लेने गई है। लौटने पर शंकर से हार्न देने के लिए कहना, जाओ।

अप्पा : डेढ़ घंटा हमसे यहां इंतजार करवाया, और अब इतनी जल्दी मचा रही हो।

सुधाकर : क्षमा कीजिए, अप्पा साहब, लेकिन ...

नलू : मां, अप्पा, आपका तार सुबह दस बजे मिला हमें। उसके बाद नंदू का तार कि पहुंचने की खबर करें। पर हमने पहले से ही एक इंगेजमेंट ले रखी थी, रूसी स्पेशलिस्ट आए हुए हैं— उनकी चाय थी। फिर भी हम जल्दी भागे— अरे ले जाओ न सामान!— (**विठोबा जाता है**)। घर पहुंचते

ही जीप और तांगे की गड़बड़ पता लगी। और यह विठोबा इतना बुद्धू है कि रेस्ट हाउस में हमें फौरन फोन करने की बात भी इसे न सूझी।

अप्पा : नट है। कलाकार का दिमाग जंगली सूअर की तरह, एक समय एक ही ओर भागता है।

नलू : तो क्या नाटक का सारा पुराण यह आपके सामने बांच गया?

अप्पा : तुम्हारे 'हेमलेट' नाटक तक सारा। तुम काम कर रही हो?

नलू : मैं नहीं कर रही हूं, पर इनके बास हैं न? उन्हें नाटक का बड़ा शौक है—उनकी श्रीमती जी को भी। वे तैयारी करवा रहे हैं। बड़े प्रयत्न में लगे हुए हैं। पहले प्रयोग के समय अप्पा आपको जरूर आना चाहिए, समझे।

अप्पा : आना चाहिए? कहां से?

नलू : बंबई से।

अप्पा : बंबई में कहां से?

नलू : वाह! यह क्या कह रहे हैं। नंदू को भी बुलाने वाली हूं। तब।

अप्पा : मैं अब नंदू के पास नहीं जाऊंगा।

नलू : पर तार में लिखा है, पांच-सात रोज के बाद भेज देना।

अप्पा : तो भी नहीं।

नलू : तो फिर?

अप्पा : यहीं रहने वाले हैं हम, हमेशा के लिए।

नलू : हमेशा के लिए?

अप्पा : चिंता न करो। यानी तब तक जब तक जिंदा हैं।

नलू : अप्पा! मैं चिंता करूंगी?

अप्पा : क्या पता! तुम्हारे चेहरे पर दिखाई दी, इसलिए कहा।

नलू : नहीं ... मुझे इस बात का भय था कि नंदू क्या कहेगा।

अप्पा : वह कुछ नहीं कहेगा। दामाद साहब, घर तो बड़ा है आपका?

सुधाकर : काफी बड़ा है।

अप्पा : और बच्चे?

सुधाकर : बच्चे दो ही हैं। पर वे लोणावला में कान्वेंट में हैं।

अप्पा : यानी घर नहीं, केवल दीवारें हैं।

नलू : अप्पा, हमारा विठोबा दस बच्चों के बराबर है। अरे, इस बातचीत में हार तो रह ही गया मेरा। इसी थैले में है न?

सुधाकर : हां, बिल्कुल अलग संभालकर लाया हूं।

नलू हार निकालती है और अप्पा के गले में पहनाती है। हार पहनाते हुए ...

नलू : अप्पा, अपने बगीचे के फूलों का हार है, मैंने खुद तैयार किया है।

अप्पा : अरे लेकिन ... यह स्टेशन पर ...

नलू : आपको याद नहीं होगा, अप्पा, लेकिन आज आपका जन्मदिन है। मां, तुम्हारे लिए वेणी बना रखी है मैंने।

कावेरी : पगली, अब मैं वेणी पहनूंगी?

अप्पा : आज वेणी, कल साड़ी, परसों बिना आस्तीनों का ब्लाउज। सरकार, आपका गुजारा न हो सकेगा इस छोकरी के घर।

नलू : अपने घर कहिए। अप्पा, तब आप गलत समझ बैठे थे। आप यहां रहेंगे, हमेशा के लिए रहेंगे, इस बात की मुझे बेहद खुशी है। जो हमारा है, वह सब कुछ अपना समझिए। (**आंखें पोंछती है**) हार्न बज रहा है। पेट्रोल पंप से शायद गाड़ी आ गई। चलिए अप्पा, चलो मां। अप्पा, अपनी कार फिएट है। मैंने चलाना सीख लिया है। अब मैं ही चलाऊंगी गाड़ी— देख लीजिए, आपकी बकरी कितनी ढीठ हो गई है। (जाते-जाते) अप्पा, आपको सहारा दूं?

अप्पा : दो, दो!

स्वर कहता साथ दे
दीप कहता बाति दे
धूप में के वृद्ध को तू
सिर्फ अपना हाथ दे।

सब लोग हंसते हैं। हंसते-हंसते बाहर जाते हैं।

पर्दा

दूसरा दृश्य

नलू-सुधाकर के बंगले का ड्राइंगरूम। आधुनिक पद्धति से सजा हुआ। ड्राइंगरूम में विठोबा अकेला है। 'हेमलेट' के अपने रोल को याद कर रहा है। हाथ में कापी उठाए वह कमरे में गोल-गोल घूम रहा है और बीच-बीच में रुककर कुछ वाक्य कहता है। टेलीफोन की घंटी बजती है। एक-दो बार वह ध्यान नहीं देता, उसके बाद रिसीवर उठाता है।

विठोबा : हेलो— कार्लेकर साहब का बंगला ... मैं हेमलेट के बाप का भूत बोल रहा हूं— माफ कीजिए मैं विठोबा बोल रहा हूं।

फोन में से : विठोबा, होश में तो हो, तुम?

विठोबा : मालकिन?

फोन में से : हां, मैं ही बोल रही हूं। सुनो, हम यहां क्लब में हैं। अभी-अभी बड़े साहब का, कलवणकर साहब का फोन आया था। सुन रहे हो न?

विठोबा : हां, मालकिन!

फोन में से : वे मेम साहब के साथ अपने यहां आने के लिए चल पड़े हैं। दस-पंद्रह मिनट में पहुंच जाएंगे।

विठोबा : अच्छी बात है, मालकिन!

फोन में से : वे अप्पा से मिलने आ रहे हैं। अप्पा घर पर तो हैं?

विठोबा : हैं ... नहीं ... कहीं नजदीक ही गए हैं। अभी आए जाते हैं।

फोन में से : उनसे रुकने के लिए कहो, और मां जी को शाम की दवाई दी?

विठोबा : जी, दे दी, मालकिन!

फोन में से : घूमने-फिरने के लिए डाक्टर ने एकदम मना किया है। तुम उनका अच्छी तरह से ध्यान रखना।

विठोबा : अच्छा, मालकिन!

फोन में से : और सुनो, बाहर का कमरा जरा ठीक-ठाक करके रखना। अप्पा ने शायद गंदा कर रखा होगा।

विठोबा : साफ कर दिया है, मालकिन!

फोन में से : और अलमारी में जो शरबत की बोतलें है न? उनमें की तीन-चार फ्रिज

में लगा देना। हम जल्दी ही पहुंच जाएंगे।

विठोबा : अच्छा, मालकिन!

फोन बंद हो जाता है। विठोबा फिर से कमरे के बीचोंबीच आकर भूत के पैंतरे में अलग-अलग स्वरों में कहता है।

शपथ लो

शपथ लो

शपथ लो

अप्पा : **(अंदर आकर, साभिनय)**

बेचैन भूत, शांत रहो।

अप्पा के हाथ में एक बड़ा-सा लिफाफा है जिस पर तेल के दाग हैं। क्षण-भर दोनों एक-दूसरे को आंखें गड़ाए देखते हैं।

विठोबा : **(होश में आकर)** वाह! गणपतराव बेलवलकर! खास गणपतराव बेलवलकर—तीस साल पहले के!

अप्पा : **(नीचे गिरी छड़ी उठाते हुए)** बेवकूफ! इस तरह हंसी-मजाक में मुझे भूतकाल में न ढकेल, बताए देता हूं। वापस आने में बड़ा कष्ट होता है। और बेवकूफ, जीते जी भूत बनने की तुझे क्या सूझी?

विठोबा : अप्पा साहब, आप भूल गए हैं, मैं ... मैं हेमलेट के भूत का काम कर रहा हूं। उसी का जरा अभ्यास कर रहा था।

अप्पा : **(हंसकर)** अरे ... हां ... सो तो मैं भूल ही गया। ठीक है, चलने दो अपना अभ्यास। **(अंदर जाने लगते हैं)**।

विठोबा : नहीं —अप्पा साहब, लेकिन यह काम कैसे किया जाए ... इतना जरा ...

अप्पा : अरे भई, सत्तर से ऊपर किसी भी बूढ़े को अपनी नजर के सामने रखो। कब्र में पैर लटकाए बूढ़े लोग पिशाच ही होते हैं। उस पार की हाउसिंग कालोनी में नंबर नहीं आता—इसलिए इधर विचरते रहते हैं, बस। करो अभ्यास ...

विठोबा : नहीं ... अप्पा साहब, एक डिफिकल्टी आ रही है ... भूत कहता है...

अप्पा : **(पीछे मुड़कर रुक जाते हैं)** क्या कहता है?

विठोबा : **(पैंतरा बदलकर)** पहले अंक के पांचवें दृश्य में भूत कहता है, उस व्यभिचारी नीच जानवर ने अपने शब्द-जाल और कुटिल दांवों से मेरी सुशील रानी को जार कर्म की ओर प्रवृत्त किया। चंद्रसेन, ऐसा नीच

कर्म वह कर कैसे सकी? तो अप्पा साहब, इस आखिरी वाक्य के कौन-से शब्द पर जोर दिया जाए? नीच पर, वह पर या कर पर? डायरेक्टर साहब कहते हैं नीच पर, मैं कहता हूं वह पर या कर पर। अब आप बताइए, किस शब्द पर जोर दूं?

अप्पा : प्रत्येक पर देकर देख लो। जो टूटेगा। उसे छोड़ दो। जो टिका रहे उसे पकड़ लो और अंत में उसी को पकड़ना पड़ता है। क्योंकि बाकी सब टूटे हुए होते हैं।

विठोबा : मैं समझा नहीं।

अप्पा : नहीं समझोगे। जरा मनन करो, ये पकौड़े अब ठंडे हो जाएंगे। उस रामय्या ने अभी-अभी ताजे निकालकर दिए हैं।

विठोबा : साहब, नाराज न होइए, पर आप बाहर से ऐसी चीजें ले आते हैं यह बात मालकिन को पसंद नहीं।

अप्पा : न हो पसंद। इस पर भी मनन करो। कोई भी जटिल समस्या पैदा होते ही व्यक्ति को मनन करना चाहिए। इससे समय निकल जाता है और जवाब भी नहीं देना पड़ता। हां, तो ये पकौड़े ठंडे होने से पूर्व सरकार को देने चाहिए— और ये तुम लो—

विठोबा : नहीं साहब ...

अप्पा : अजी लो भी। मनन के लिए अच्छे होते हैं।

विठोबा : ऐसी बात नहीं साहब, आज मेरा व्रत है।

अप्पा : ठीक है। तो फिर अपना अभ्यास करो।

विठोबा : और, अप्पा साहब, बड़े साहब आपसे मिलने आ रहे हैं अभी। नाटक के बारे में बातें करने के लिए।

अप्पा : आने दो। उन्हें देकर भी बचे रहेंगे, इतने पकौड़े दिए हैं रामय्या ने, भवानी विलास होटल। भवानी के विलास करने की बात इसके बाप ने भी सुनी कभी? पर पकौड़े अच्छे बनाता है। सरकार ...!

अप्पा अंदर जाते हैं। विठोबा फिर से अभ्यास के पैंतरे में।

विठोबा : चंद्रसेन, ऐसा नीच कर्म— (**टेलीफोन की घंटी बजती है। रिसीवर उठाता है**)।

विठोबा : चंद्रसेन— हलो ...

फोन में से : विठोबा, आज भंग ज्यादा पी गए हो क्या?

विठोबा : नहीं, मालकिन!

फोन में से : बड़े साहब तो आए नहीं न अभी?

विठोबा : नहीं, मालकिन!

फोन में से : अप्पा?

विठोबा : आ गए।

फोन में से : उनसे रुकने के लिए कह दिया न?

विठोबा : हां, मालकिन!

फोन में से : मीटिंग खत्म ही होने वाली है। हम बस निकले ही समझो। और शरबत की बोतलें फ्रिज में रख दीं?

विठोबा : (**घबराकर**) फ्रिज में!

फोन में से : तब क्या कहा था तुमसे?

विठोबा : जी, जी, रख दीं।

फोन में से : बुद्धू! (**फोन बंद करती है**)।

विठोबा : (**लपककर भीतर जाते हुए**) फ्रिज में शरबत की बोतलें ... चंद्रसेन, ऐसा नीच कर्म—फ्रिज में—उसने किया कैसे ... (**विठोबा के अंदर जाने के क्षण-भर बाद कालबेल बजती है। फिर से दो बार बजती है। भीतर दरवाजे से पकौड़ों का लिफाफा थामे अप्पा बाहर जाते हैं**)।

अप्पा : (**दरवाजे की ओर बढ़ते हुए**) आ रहा हूं। (**अप्पा दरवाजा खोलते हैं। बड़े साहब कलवणकर और उनकी पत्नी भीतर आते हैं। दोनों अप्पा को नमस्कार करते हैं**)।

कलवणकर : अभी मिस्टर कार्लेकर तो नहीं आए?

अप्पा : नहीं, मुझे लगता है ...

कलवणकर : आने ही वाले हैं क्लब से। पर सच तो यह है कि हमें आप ही से मिलना था।

अप्पा : अच्छी बात है—बैठ तो जाइए।

कलवणकर : ये हैं मेरी पत्नी, मिसेज कलवणकर। यह मल्लिका का काम कर रही हैं। मैं चंद्रसेन का। नाटक का डायरेक्शन भी मैं ही कर रहा हूं।

अप्पा : जी, परसों देखा मैंने। (**विठोबा झांकता है**) अरे विठोबा, तुम्हारे साहब के बड़े साहब आए हैं, पागल! और तुम्हारे डायरेक्टर? कुछ चाय-पानी भी लाएगा या नहीं?

कलवणकर : नहीं, अप्पा साहब! होस्ट आने पर ले लेंगे। तुम जाओ, विठोबा!

विठोबा : जी, साहब! (**जाता है**)।

कलवणकर : परसों की रिहर्सल आपको कैसे लगी, अप्पा साहब? पर पहले एक बात बताए देता हूं। मैं हूं तो इंजीनियर, पर नाटकों का बड़ा शौक है। बंबई में हम दोनों आर्ट थिएटर में काम करते थे। पिछले साल के कंपिटीशन में इन्हें इनाम मिला था—फीमेल रोल का, और मुझे डायरेक्शन का।

अप्पा : भई वाह!
कलवणकर : 'हेमलेट' की भारी जिम्मेदारी उठाई है इस साल।
श्रीमती कल. : इन्होंने पहले भी हेमलेट का रोल किया था।
कलवणकर : हां, पर वह था अंग्रेजी प्रयोग में। यह नाटक, अप्पा साहब, मैं बिल्कुल नये ढंग से खेलने वाला हूं। एकदम नया ट्रीटमेंट देने वाला हूं इसे। शेक्सपीयर के नाटक पहले भी हमारे यहां खेले गए हैं। पर मैं समझता हूं कि असली शेक्सपीयर को कोई भी नहीं समझ पाया।
अप्पा : जी हां, आप ठीक कह रहे हैं। समझने के लिए वह सचमुच बड़ा मुश्किल है।
कलवणकर : दो दिन आपने रिहर्सल देखी। पर आप जल्दी आ गए, इसलिए बातचीत न हो सकी। कुल मिलाकर आपका क्या इंप्रेशन रहा?
अप्पा : वाह! अच्छा हो रहा है। लाजवाब!
कलवणकर : आप पहले 'हेमलेट' खेला करते थे न?
अप्पा : जी हां!
कलवणकर : आपके कुछ सुझाव हों तो—
अप्पा : जी नहीं, जी नहीं, कुछ भी नहीं! यानी मेरा विचार तो यह है साहब, कि न तो ब्रह्मपुत्र गंगा को बताए कि कैसे बहना चाहिए और न गंगा ब्रह्मपुत्र को। एक ही पहाड़ से दोनों निकलती हैं और एक ही समुद्र में जा मिलती हैं। पर दोनों के रास्ते भिन्न हैं। दोनों के स्वभाव भिन्न हैं। कोई भी एक-दूसरे को सुझाव न दे, यही अच्छा है।
श्रीमती कल. : वाह! यह भी कोई बात है? यह नाटक सरकारी कंपिटीशन के लिए कर रहे हैं हम, एकदम टाप प्रयोग होना चाहिए।
अप्पा : होगा, होगा! आप ये पकौड़े लेंगे?
कलवणकर : पकौड़े?
अप्पा : भवानी विलास होटल वाला रामय्या है न? उसने बनाए हैं।
श्रीमती कल. : रामय्या! छि:, कितनी गंदी दुकान है वह! कौन जाने कमबख्त साल में एक बार भी नहाता है या नहीं?
अप्पा : मैं भी ठीक-ठीक नहीं जानता। पर पकौड़े बनाता है, और अच्छे बनाता है, इतना तय है। जरा ... (**लिफाफा आगे बढ़ाते हैं**)।...
कलवणकर : थैंक यू! हम नहीं लेंगे। मुझे लगता है, अप्पा साहब, हमारी रिहर्सल आपको कोई विशेष अच्छी नहीं लगी।
अप्पा : जी नहीं ... ऐसी बात नहीं। लेकिन ...
श्रीमती कल. : हमारी नयी स्टेजक्राफ्ट आपकी समझ में न आई होगी।
अप्पा : (**खौलकर**) आपकी स्टेजक्राफ्ट! (**अपने को संभालकर**) माफ

कीजिए। शायद उस बेवकूफ ने एक पकौड़े में मिर्च डाल दी थी, नहीं आपकी स्टेजक्राफ्ट आदि ठीक है। शिकायत केवल इस बात की है कि पात्रों का बोलना समझ में नहीं आता। कोई बड़बड़ाता है, कोई गुनगुनाता है, कोई कानाफूसी करता है तो कोई फुसफुसाता है। कोई भी ठनठनाकर नहीं बोलता कि सात-आठ सौ लोग सुन सकें।

कलवणकर : यह नये और पुराने का भेद है, अप्पा साहब! मैंने सारा नाटक जान-बूझकर सबड्यूड टोन में रखा है। आई डोंट बिलीव इन शाऊटिंग। मैं नहीं चाहता कि नाटक पुराने ढंग का मेलोड्रामेटिक हो।

अप्पा : ठीक है—पर आप सचमुच पकौड़े नहीं लेंगे? चखिए तो सही—

श्रीमती कल. : नहीं!

अप्पा : नहीं? नाटक वालों को यह विषय निषिद्ध नहीं होना चाहिए।

कलवणकर : हम सारा सिंबालिक सेट रखने वाले हैं, अप्पा साहब, यानी जंगल हो तो केवल एक पेड़ या शाखा। दरबार हो तो एक सुनहरी कुर्सी। रात हो तो केवल एक दीपक—श्मशान हो तो केवल एक कब्र।

श्रीमती कल. : और यह सब अलग-अलग लेवल्स पर दिखाना होता है।

कलवणकर : यानी, मान लीजिए कि ऊपर के लेवल पर रजवाड़ा है। तो वहां केवल दरवाजे की एक बड़ी चौखट आएगी।

श्रीमती कल. : दीवारें नहीं, समझे आप, सिर्फ चौखट!

कलवणकर : और नीचे के लेवल पर जंगल या रास्ता। यानी सिर्फ एक पेड़ या बत्ती का खंभा!

अप्पा : समझ गया—विठोबा! ओ विठोबा! (**विठोबा आता है**) साहब के लिए कोई ठंडा-सा शर्बत ले आओ। बड़ी गर्मी हो रही है।

कलवणकर : रहने दीजिए। मि. कार्लेकर के आने के बाद देखेंगे। तुम जाओ विठोबा!

विठोबा : अच्छा, साहब! (**जाता है**)।

कलवणकर : नाटक को नाटकीयता की शृंखलाओं से मुक्त होना चाहिए, अप्पा साहब, अब मैं एक प्रयत्न कर रहा हूं। हमें लोगों को ट्रेन करना है। उनके मन में पुराने भूत जमें बैठे हैं।

अप्पा : जी हां, यह बड़ी बुरी आदत है भूतों की। मरघट छोड़कर लोगों के मन में जमकर बैठने की।

कलवणकर : आपने गणपतराव जोशी को देखा है, अप्पा साहब?

अप्पा : जी हां, देखा है।

कलवणकर : माफ कीजिए, लेकिन गणपतराव, बालगंधर्व, केशवराव, ये सब कोरे लीजेंड्स हैं। एक विकृत मारबिड समाधान के लिए निर्मित। मैंने

गणपतराव के चित्र देखे हैं। चरित्र भी पढ़ा है। आई डोंट बिलीव ही वाज ए ग्रेट एक्टर, नाट इवन ए गुड एक्टर। शिकार हांकने वालों के समान चिल्लाने की यह परंपरा वहीं से शुरू हुई है।

श्रीमती कल. : और काम करते समय शराब के नशे में चूर रहते थे। विंग में लोगों को उन्हें बताना पड़ता था कि आज फलां-फलां नाटक है...

कलवणकर : नहीं, मैं तो कहता हूं कि गणपतराव चाहे शराब पीते हों या गांजा, प्रश्न यह नहीं है। कलाकार को छूट होनी चाहिए इन बातों की। लेकिन ...

अप्पा : **(झल्ला उठते हैं। हाथ का लिफाफा जमीन पर दे मारते हैं और जोर से चिल्ला पड़ते हैं)** अब सहन नहीं होता मुझसे? आप चले जाइए यहां से ... इसी समय चले जाइए—गणपतराव को छूट—मैं कहता हूं जाइए ...

कलवणकर : (उठकर) अप्पा साहब, आप ...

अप्पा अभी बोल ही रहे थे कि नलू और सुधाकर दरवाजे पर पहुंच जाते हैं। विठोबा भी भीतरी दरवाजे के पास आकर खड़ा हो जाता है।

नलू : **(दौड़कर आगे आते हुए)** अप्पा! अप्पा! यह क्या मचा रखा है आपने?

अप्पा : यह घर मेरा नहीं, मैं जानता हूं। फिर भी कहता हूं, चले जाइए। मेरे आकाश के हर टुकड़े पर गणपतराव की मुहर लगी है—उनके विषय में ये शब्द!

श्रीमती कल. : चलिए, एक पल भी न ठहरिए यहां।

नलू : साहब, मैं प्रार्थना करती हूं ...

सुधाकर : साहब, आप जरा ...

कलवणकर : ओल्ड ईडियट? आई एम नाट गोइंग टु टालरेट दिस। चलो रागिनी ...

रोकने के प्रयत्न के बावजूद दोनों चले जाते हैं। सुधाकर उनके पीछे जाता है। नलू दीवार को पकड़े पत्थर की तरह खड़ी रहती है। विठोबा भीतर जाता है। अप्पा दुखी होकर खड़े हैं।

अप्पा : **(क्षण-भर बाद)** नलू! मुझसे भूल हुई। मुझे इस तरह नाराज नहीं होना चाहिए था।

नलू : अप्पा, आप भीतर जाकर जरा चुपचाप लेट जाइए।

अप्पा : पर मैं अपना आपा खो बैठा—जबसे मेरी घड़ी खो गई है तबसे—

नलू : (**तीखे स्वर में**) अप्पा, कृपा करके आप भीतर जाइए ... भीतर वाले कमरे में।

अप्पा : (**रुककर**) हां ... हां जाता हूं ... जाता हूं बेटा!

अप्पा लकड़ी का सहारा लेकर गर्दन झुकाए भीतर जाते हैं। नलू धीरे-धीरे जाकर सोफे पर बैठ जाती है। सुधाकर अंदर आता है। दरवाजा बंद करता है और मेज के पास स्तब्ध खड़ा हो जाता है। क्षण-भर बाद—

नलू : (**धीमे स्वर में**) सुधाकर, मुझसे नाराज हैं आप?

सुधाकर : क्यों, तुमसे नाराज होने का कारण?

नल : मैंने अप्पा को रख लिया यहां।

सुधाकर : तो तुमने गलती नहीं की, नलू, यू हैव डन योर ड्यूटी।

नलू : इसका परिणाम क्या होगा? अपने घर में ऐसा अपमान हुआ उनका! वे लोग बड़े टेढ़े मिजाज के हैं। भूलेंगे नहीं वे।

सुधाकर : तुम चिंता न करो, नलू! कुछ दिन परेशान करेंगे। मैं सह लूंगा। कलवणकर साहब की नाराजगी का अब मैं आदी हो गया हूं।

नलू : पहले मुझे लगा था, भैया-भाभी ही गलती पर होंगे। पर अब पता लग रहा है, इन्हें संभालना कितना कठिन है। नंदा ने जो लिखा था कि ये लोग जीना दूभर कर देते हैं, वह झूठ न था।

सुधाकर : एक अलग दुनिया में रहने वाले लोग हैं वे, नलू! हमारी दुनिया से मेल खाना उनके लिए भी कठिन है।

नलू : कारणों के जान लेने-भर से बातें सहन नहीं की जा सकतीं। मैं नहीं जानती, इसका अंत क्या होगा। मैंने आपको नहीं बताया। परसों अप्पा ने सूबेदार साहब से दस रुपये मांगे थे खुली सड़क पर।

सुधाकर : रुपये मांगे थे?

नलू : उन्हें तो अब किसी भी चीज का ख्याल नहीं है। चाहे जिससे पैसे मांग बैठते हैं। सड़क पर कहीं भी अड्डा जमाकर बैठ जाते हैं। किसी से कुछ भी कह बैठते हैं। किसी भी गंदे होटल में जो मन करता है, ले आते हैं। खैरियत है कि सुभाष और सुशील कान्वेंट में हैं।

सुधाकर : हमें समझना चाहिए नलू, बुढ़ापा दूसरी बाल्यावस्था होती है।

नलू : वह तो ठीक है। पर इस दूसरी बाल्यावस्था के लिए मां कहां से आए? यह देख लिया न आपने! चारों ओर उन गंदे पकौड़ों के टुकड़े बिखरे पड़े हैं। और बात भी ठीक से करते हैं? बराबर गालियों की बौछार होती रहती है। घर में भी कहीं जा घुसेंगे और क्या उल्टा-सीधा करेंगे, इसका भरोसा नहीं? रखमा बता रही थी, परसों अलमारी से चंदन का

हाथी गायब हो गया। सारा घर ढूंढ़ मारा और मिला अप्पा के सिराहने! बोले, मुझे हाथी पसंद है इसलिए मैंने ले लिया। इस हद तक नौबत आ चुकी है। क्या करूं, मेरी समझ में तो कुछ भी नहीं आता। सुधाकर, आप कहते नहीं, पर मैं जानती हूं कि कितना कष्ट है आपको? लेकिन (**सिसककर**) मैं भी क्या करूं? (**आंखें पोंछती है**)।

सुधाकर : (**पास आकर उसके कंधे पर हाथ रखता है**) पागल तो नहीं हो तुम, नलू? इतना क्यों परेशान होती हो?

नलू : (**निश्चय से**) कुछ दिनों पहले मेरे मन में एक विचार आया था, उस पर अमल करने का अब निश्चय कर लिया है, सुधाकर! और कोई चारा ही नहीं।

सुधाकर : क्या निश्चय कर लिया है?

नलू : उन दोनों को पिछले आउट हाउस में रखने का! एक कमरा खाली है वहां।

सुधाकर : लेकिन ...

नलू : कमरा साफ-सुथरा कर लेंगे हम! मां तो अब हमेशा बिस्तर पर ही पड़ी रहती है। उसकी चारपाई वहां ले जाने के लिए कहती हूं और अप्पा का सामान भी। उनका खाना-पीना, चाय-पानी सब वहीं होगा। विठोबा करेगा सबकुछ। उन्हें घर से अलग करना ही होगा।

सुधाकर : हम इतने कठोर हो जाएं?

नलू : और कोई उपाय नहीं है। उनकी देख-भाल करने की जिम्मेदारी मुझ पर है। मैं देख-भाल करूंगी। पर उसके पीछे आपके सुख और गृहस्थी को बर्बाद नहीं होने दूंगी। (**जोर से**) विठोबा, विठोबा! (**विठोबा आता है**) आउट हाऊस का कमरा साफ कर लो और मां जी की चारपाई कल सुबह वहां लगा दो। मां जी और पिताजी कल से वहां रहेंगे।

विठोबा : अच्छा, मालकिन!

नलू : उनका चाय-पानी, खाना-पीना सब कुछ वहीं किया करना, तुम उनका अच्छी तरह से ध्यान रखना, समझे! रखमा से भी कह देना! जाओ।

विठोबा : जी, मालकिन! (**जाता है**)।

नलू : (**बिलखकर रोने लगती है**) सुधाकर—सुधा ... मेरा कलेजा फटा जा रहा है। अप्पा कहेंगे ... कहेंगे ... मेरी बकरी मुझ पर नाराज हो गई। लेकिन—लेकिन ... मुझे अपने घर को घर बनाए रखना है। कितनी बड़ी जिम्मेदारी का बोझा आप अपने सिर पर उठाए चलते है—मैं

जानती हूं। थके-मांदे जब आप घर लौटते हैं तब घर में यदि आपको सुख-शांति न मिले तो ... तो ... नहीं, सुधाकर, यह सब तो मुझे करना ही होगा ... करना ही होगा ...।

सुधाकर : नलू, तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं है—तुम अंदर जाकर थोड़ा आराम करो ... चलो—जो करना होगा कल देखेंगे। (**अंदर जाते हैं**)।

पर्दा

तीसरा दृश्य

आउट हाऊस का कमरा शाम का समय।

दीवार से सटी हुई चारपाई पर कावेरी लेटी है। अप्पा एक पुरानी भारी आरामकुर्सी पर बैठे 'ज्ञानेश्वरी' के पहले अध्याय में से कुछ ओवियां जोर से पढ़कर सुना रहे हैं। चार-पांच ओवियां अर्थ-सहित पढ़ लेने के बाद ...

कावेरी : सुना आपने ?

अप्पा : क्या है, सरकार?

कावेरी : क्या बजा है?

अप्पा : कौन जाने? जब से मेरी घड़ी खोई है, यह प्रश्न हमेशा के लिए मिट गया है। अब तो दिनों का हिसाब है, घंटों का नहीं।

चश्मा चढ़ाकर फिर से आगे पढ़ने लगते हैं।

कावेरी : सुनिए!

अप्पा : (**चश्मा उतारकर**) अब क्या है?

कावेरी : आज यहीं तक रहने दीजिए। मेरी समझ में नहीं आता।

अप्पा : (**किताब एक ओर रखकर**) अच्छी बात है। हमारा आचरण सुधरे, इसीलिए सब लोगों ने मिलकर यह ग्रंथ हमें भेंट किया। पर पहला अध्याय ही समाप्त होने में नहीं आता। क्या कह रही हैं आप, सरकार?

कावेरी : आप हंसें नहीं तो बताती हूं।

अप्पा : नहीं हंसूंगा।

कावेरी : मुझे न, आज काफी आराम है।

अप्पा : अगर है भी तो यों कहना नहीं चाहिए। शैतान के बच्चे दरवाजे की ओट, बैठे रहते हैं। वे सुन लेते हैं।

कावेरी : सुन लेने दीजिए। भगवान के बंदे भी दूसरी ओर बैठे होंगे।

अप्पा : तो कहना चाहती हैं, आप-हम घूमने चलें हाथ में हाथ डाले—किसी बाग में?

कावेरी : छि:! यों हंसी उड़ाएंगे तो मैं नहीं बोलूंगी, हां।

अप्पा : (**उठते हैं**) मैं भी कितना मूर्ख हूं। अभी बाग कहते ही याद आ गया। सरकार, आज मैं आपके लिए एक मजेदार चीज लाया हूं, अभी बाहर से आया न, तब। (**खूंटी पर टंगा हुआ कोट टटोलने लगते हैं**)।

कावेरी : क्या लाए हैं?

अप्पा : पहचानो।

कावेरी : पकौड़े तो नहीं? नहीं तो फिर उस दिन की तरह कोहराम मच जाएगा।

अप्पा : खाने की चीज नहीं है।

कावेरी : पहचान लिया, चंपा के फूल हैं।

अप्पा : (**चारपाई की ओर आते हुए**) नटखट, कैसे पहचाना तुमने?

कावेरी : (**हंसकर**) अजी, चंपा के फूल भी कभी छिपाए छिपते हैं? जब से आप लौटे हैं सारे कमरे में सुगंध फैल रही है। 'ज्ञानेश्वरी' सुनने में मैं भूल गई थी।

अप्पा : (**निकट आकर**) एक फूल तुम्हारी वेणी में लगा दूं?

कावेरी : (**सुख से फूलकर**) छि:! कैसी बातें करते हैं। दीजिए मेरे हाथ में। (**फूल लेती है**)। कितने अच्छे हैं! किसके बाग पर धावा बोला?

अप्पा : भई, बाग किसी का भी हो, फूल भगवान के होते हैं। हर फूल की हर पंखुड़ी पर भगवान के हस्ताक्षर होते हैं। आकाश के सितारों की तरह ये भी भगवान के घर की दौलत हैं। उस बाग का मालिक जब मेरी ओर लपका तो मैंने उससे यही कहा। मैं बोला, भाई, किसी को अपनी छत पर यदि हिरनी नक्षत्र का व्याध का तारा दिखाई दे तो वह उसकी पैतृक संपत्ति नहीं बन जाता।

कावेरी : (**हंसती है**) लेकिन जंची उसे आपकी बात?

अप्पा : नहीं जंची। उसे केवल एक ही बात जंची कि मैं कार्लेकर साहब का ससुर हूं। लोगों को छोटी चीजें जंचती हैं, बड़ी नहीं।

कावेरी : खैर छोड़िए। यहां मेरे पास तो जरा बैठिए।

अप्पा : क्या कहती हो? (**चारपाई पर बैठ जाते हैं**)।

कावेरी : चार दिन से एक बात मेरे मन में झांक रही है। आज कहे देती हूं

अप्पा : कौन-सी बात?

कावेरी : मुझे लगता है कि अब हम यहां न रहें।

अप्पा : और कहां जाएं?

कावेरी : हम अपने गांव जाकर रहेंगे। मोरवाडी।

अप्पा : यहां तुम्हें कष्ट है, कावेरी?

कावेरी : आप नहीं जानते?

अप्पा : जानता हूं। इस कबाड़खाने में हमारा बोरिया-बिस्तर आते ही सबकुछ स्पष्ट हो गया। पर ये बच्चे शरीफ हैं। जरूरत से ज्यादा शरीफ हैं। मन में कुछ भी हो पर बोलकर नहीं दिखाते। ऐसी स्थिति से लाभ उठाते हुए हमें चाहिए कि हम ऐसा दिखाएं कि हम कुछ भी नहीं जानते और जो टहनी हाथ लगे उसे पकड़कर लटके रहें। इसी में अकलमंदी है।

कावेरी : नहीं। ऐसी दशा में मैं कभी भी ठीक न हो सकूंगी।

अप्पा : और वाडी में ठीक हो जाओगी? वहां इतना बड़ा डाक्टर देखने को भी नहीं मिलेगा।

कावेरी : न मिले। कपड़े में घुसी हुई फांस-सी हमारी दशा है। इसके पहले कि वह फांस कांटे की तरह चुभने लगे, बुद्धिमानी इसी में है कि हम यहां से चल दें। नयेपन के चार दिन कभी के समाप्त हो गए। अब पहले जैसा साथ-साथ उठना-बैठना और बोलना भी नहीं। हंसी-मजाक तो है ही नहीं, पर नाराजगी भी नहीं हैं। चार-चार रोज तक दर्शन भी नहीं होते किसी के।

अप्पा : उन्हें काम होते हैं, सरकार! हम दोनों की तरह खाली नहीं हैं वे। बेटी, कितनी भाग-दौड़ करती रहती है सुबह से। और दामाद साहब के सिर पर तो पहाड़-सी जिम्मेदारियां हैं। हमेशा काम और मेहमानों का आना-जाना। कहीं कुछ कमी रह जाए तो हमें भी संभाल लेना चाहिए।

कावेरी : क्या मैं इतना भी नहीं समझती? पर मुझे लगता है, जब तक ऊपर से सब ठीक-ठाक है, हमें अलग हो जाना चाहिए। हमें भी उनकी परीक्षा नहीं लेनी चाहिए। हम अलग हो जाएं, वाडी जाकर रहें तो उनके प्रेम से वंचित होने की नौबत नहीं आएगी। प्रेम बनाए रखने के लिए भी यह जरूरी है कि हम जरा दूर रहें।

अप्पा : (**उठते हैं**) ठीक है, सरकार, आपका कहना ठीक है। सच तो यह है कि आपने मेरे ही मन की बात कही है। हम वाडी चले जाएं तो सारी बातें सीधी और सुखदायक हो जाएंगी। नलू— मेरी बिटिया ... नाचती-खेलती आएगी मायके, हमारे घर। उसके उन साहबी छोकरों को मोरवाडी की नदी में अच्छी तरह डुबकियां लगाऊंगा मैं और ..., और ... फिर नंदा और शारदा भी आएंगे मेरी नन्ही को लेकर। मेरे मन से, सरकार, नन्ही जाती ही नहीं। दिन-रात पुकारती रहती है। पर हमें किसी पर भी क्रोध नहीं करना है। जो होना था, हो गया। जब सब बच्चे आ जाएंगे न सरकार, तब हम रोज शाम को शेलार की अमराई

जाया करेंगे। आंगन में बैठकर चांदने में खाना खाया करेंगे। मंजूर है, सरकार, मंजूर है। हमें बेटी को नैहर प्रदान करना है, नाती-नातिनों को ननिहाल प्रदान करना है, यानी कुछ-न-कुछ प्रदान करना है, केवल लेने का शौक छोड़कर। सरकार, गलती हम ही करते हैं। अतीत के गर्त में पैर लटकाए बैठे बरगद के पेड़ थे हम। पैशाचिक एकांत का डेरा डालने वाले, आस-पास की हवा को ही नहीं बल्कि नदी के पानी को भी स्वार्थ की गहरी छाया से कालिख पोतने वाले बरगद के पुराने पेड़, हमें इसमें से बाहर निकलना है। बस, तो तय रहा। वाडी जाएंगे। गनीमत है जो वाडी का घरौंदा हमने किसी को दे नहीं दिया। पर अब उसका क्या हाल होगा, ईश्वर ही जाने!

कावेरी : उसकी चिंता नहीं। यह घर छूटते ही मेरा बिस्तर छूट जाएगा और मैं अपने हाथों से दीवारें लीपूंगी, जमीन लीपूंगी, रंग भी मैं ही करूंगी। एक बार आंचल बांधूंगी तो घरौंदे को भी राजमहल बना दूंगी मैं। केवल आप बीच में गड़बड़ नहीं करेंगे और न मुझ पर चिल्लाएंगे। पहले से बताए देती हूं।

अप्पा : अच्छा किया जो बता दिया। वहां पहुंचने तक याद रहना चाहिए, बस।

कावेरी : और प्रियतम—

अप्पा : प्रियतम?

कावेरी : छिः, आ जाता है कभी-कभी जुबान पर।

अप्पा : आने दो न! इसमें इतना परेशान होने की क्या बात है? लगता है जैसे तपे शरीर पर गुलाबजल छिड़क दिया हो। हां, तो क्या कह रही थीं, तुम?

कावेरी : कह रही थी, कई साल से मेरे मन में एक अरमान है। पिछले आंगन में एक अच्छी-सी बाड़ लगाएंगे और वहां एक अच्छा-सा तुलसी वृंदावन बनवा लेंगे।

अप्पा : तथास्तु!

कावेरी : हार बेचा था, उसमें के अभी डेढ़ हजार रुपये हैं अपने पास।

अप्पा : कहां है वे रुपये? मैं तो भूल ही गया था।

कावेरी : चारपाई के नीचे मेरे ट्रंक में हैं। और इसके अतिरिक्त सोने के कड़े हैं, चार चूड़ियां हैं, दो अंगूठियां हैं। हम सब बेच देंगे और एक छोटा-सा खेत खरीद लेंगे।

अप्पा : एक खेत अभी अपने पास भी है।

कावेरी : तो फिर खेती के औजार खरीदेंगे, बैल खरीदेंगे। और फिर ... फिर आप स्वयं किसान बनेंगे।

अप्पा : **(उस कल्पना से सुखी होकर)** वाह! बड़ी सुंदर कल्पना है। क्षितिज पर सुनहरी आभा फैलाते ही मैं बैल लिए खेत पर जाऊंगा। आकाश की केसर-कस्तूरी का आस्वाद लेते हुए। मैंने स्टेज पर कभी गाने नहीं गाए पर कुएं पर मोट चलाते हुए गाऊंगा, यदि न गा पाया तो नाटक के डायलाग दोहराऊंगा, हल चलाऊंगा, जो चाहूंगा करूंगा, और फिर सूरज सिर पर आते ही मेंड की पगडंडी से तुम मेरा खाना लाओगी। पर एक बात बताए देता हूं, तुम्हें खुद आना होगा। नौकर को भेजोगी तो कुएं में ढकेल दूंगा उसे। तुम जानती हो, मेरा गुस्सा बड़ा विकट होता है।

कावेरी : **(हंसते हुए)** आऊंगी, आऊंगी। मैं ही आऊंगी।

अप्पा : और सुन लो। जैसे तुम्हें वृंदावन चाहिए, वैसे मुझे थिएटर भी चाहिए। बाहर वाले बरामदे को हम थिएटर कहेंगे। वहां मैं नाटकों की किताबें रखूंगा और जब चाहूंगा जोर-जोर से भाषण दोहराया करूंगा। है मंजूर? फिर झिख-झिख न करना या शिकायत न करना कि कान बहरे हो रहे हैं।

कावेरी : नहीं करूंगी।

अप्पा : राम जी शेलार, सयाजी शेलार, गंगाराम जागले, महादेव कोली ... सबको बड़ी खुशी होगी। फिर से चबूतरे की महफिलें जमने लगेंगी। मन को, शरीर को चुभने वाली ये सारी जंजीरें टूट जाएंगी और हम आजाद हो जाएंगे। पूरी तरह आजाद हो जाएंगे, कावेरी। कावेरी ...!

कावेरी : छि:! इतने जोर से क्यों पुकार रहे हैं? कोई सुनेगा तो क्या कहेगा।

अप्पा : कहेगा कि बूढ़े को अब भी अपनी पत्नी का नाम याद है— **(निकट जाकर उसका हाथ अपने हाथ में लेकर)** कावेरी, पिछले पचास-साठ वर्षों में मैं तुम्हें एक बात बताना भूल गया। वह आज बताऊंगा।

कावेरी : कौन-सी बात?

अप्पा : तुम मुझे बहुत अच्छी लगती हो। मैं बहुत प्यार करता हूं तुमसे।

कावेरी : **(आनंदित होकर हंसते हुए)** छि:! यह भी क्या कोई कहने की बात है? क्या मैं जानती नहीं थी?

अप्पा : फिर भी एक बार बताने को जी करता है।

कावेरी : एक बात पूछूं? नाराज न होना।

अप्पा : पूछो।

कावेरी : **(मुस्कराती हुई)** मेरी सौतें कितनी थीं?

अप्पा : **(हंसते हैं)** बाप रे! ढलती याद्दाश्त में यह पुराने जमाखर्च अब कहां याद हैं? पर तुम्हें इतना बताए देता हूं, कावेरी, तुम्हारी सौत कोई नहीं

थी, जो थीं वे केवल मेरी दोस्त थीं।

कावेरी : मैं दोस्त नहीं थी?

अप्पा : तुम पत्नी थीं।

कावेरी : पत्नी दोस्त नहीं हो सकती?

अप्पा : हो सकती है, होती भी है, लेकिन दोस्त की अपेक्षा मां अधिक होती है। दीवानखाना छोटा होता है, पर मंदिर बड़ा है। आकाश छोटा होता है, पर पृथ्वी बड़ी होती है। थोड़े में कहूं तो पत्नी एक बंदरगाह है, कावेरी, पति नामक जहाज के लिए।

कावेरी : बड़ा कठिन विषय जान पड़ता है।

अप्पा : जहाज अपने पाल उठाए सात समुद्र पार यात्रा करता है। ये समुद्र होते हैं व्यवहार के, कला के, ध्येय के, प्रेम के और द्वेष के भी। इन समुद्रों में जाओ, दूर के किनारे देखो, तूफान से मुकाबला करो, चांद-सितारों से रिश्ता जोड़ो। संतप्त लहरों की मस्ती का अनुभव करो। जीवन ऐसा हो कि पग-पग पर मृत्यु का सामना करना पड़े। पर इन सारे उद्रेकों में से गुजरते हुए जहाज की आंखें सतत अपने बंदरगाह की ओर लगी रहती हैं। पराजय की चोटें और विजय के झंडे लिए वह वापस बंदरगाह में आता है और वहां के हरे-नीले प्रकाश में, प्रशांत पानी के गलीचे पर आराम करता है। जहाज की विजय का जय-जयकार बंदरगाह में होता है, पराजय की सांत्वना भी उसे बंदरगाह में ही मिलती है। इतना महान है बंदरगाह, यानी पत्नी। यानी तुम।

कावेरी : (**हंसते हुए**) यह महानता बुरी नहीं। पर सच बतलाइए, अब भी मेनका की याद आती है, आपको?

अप्पा : अनेक चोटों में से वह भी एक चोट है। और वह चोट भी मैं अपने बंदरगाह में ले आया। वहीं मर सकी वह।

कावेरी : (**खुलकर हंसती है**) मैं जानती थी, आप क्या उत्तर देंगे। एक बार पूछ लेना चाहती थी, बस। मन में कोई बात न रह जाए। सारा बोझ यहीं छोड़कर हल्के मन से अर्थी पर बैठ सकूं।

अप्पा : मुझसे पहले?

कावेरी : सार्थक हो जाऊंगी मैं।

अप्पा : और मेरा क्या होगा? बंदरगाह नहीं रहेगा तो जहाज कहां जाएगा?

कावेरी : (**हंसती है**) छोड़िए। यूं ही माज़क किया मैंने। मैं इतनी जल्दी मरने वाली नहीं और न किसी को मरने दूंगी। लेकिन मोरवाडी जाना तो तय रहा न?

अप्पा : तय रहा—तय रहा—तय रहा।

विठोबा दवाई की शीशियां, गिलास आदि लिए अंदर आता है।

विठोबा : शपथ लो—शपथ लो—शपथ लो।

अप्पा : (**लापरवाही से**) हां, हां, शपथ लेता हूं, मैं मोरवाडी जाऊंगा।

विठोबा : मोरवाडी या चोरवाडी?

अप्पा : (**मुड़कर**) बेवकूफ!

विठोबा : हम भी विट करना जानते हैं, अप्पा साहब! छुटपन में ही गडकरी जी का साया मुझ पर पड़ा था। समर्थ मंडली में तो लोग मुझे विठोबा की जगह विटोबा कहा करते थे।

अप्पा : बेवकूफ, ऐसे व्यंग्य करने के लिए यह क्या कोई नाटक कंपनी का रसोईघर है?

विठोबा : अप्पा साहब, नाटकवालों की दुनिया होती है कलंदरों की दुनिया, पर नाटक कंपनी के रसोईघर में जितनी शराफत थी उतनी इन शरीफ लोगों के दीवानखाने में भी नहीं मिलेगी—यह दवाइयां लीजिए। यह मांजी की, यह आपकी। हम वापस शपथ लेने जाते हैं कि हम चोर नहीं हैं।

अप्पा : अरे, पर पागल...

विठोबा : (**जाते-जाते मुड़कर**) अप्पा साहब, यदि मैंने अपने जीवन में कुछ भी चुराया है तो वे हैं केवल नाटककारों के वाक्य। बस। इसके सिवा और कुछ भी नहीं—

अप्पा : अरे, पर तुमने चोरी की, यह कहता कौन है?

विठोबा : चोरी की है, यह कोई नहीं कहता। पर चोरी नहीं की, यह भी कोई नहीं कहता। जाता हूं मैं। मालकिन आ रही हैं।

नलू और सुधाकर अंदर आते हैं।

नलू : विठोबा, यहां गप्पें मार रहे हो। सुनो, फौरन लांड्री जाओ, साहब के कपड़े ले आओ और सूटकेस हमेशा की तरह भर दो।

विठोबा : जी, मालकिन! (**जाता है**)।

अप्पा : कितने दिन के बाद आ रही है मेरी गुड्डी इधर। नलू, आज एक मजेदार बात बताने वाले हैं हम तुम्हें।

नलू : आज आप घूमने नहीं गए, अप्पा?

अप्पा : नहीं गया। तेरी मां को उमंग आ जाती है कभी-कभी प्यार की बातें करने की। फिर बैठना पड़ता है और कुछ गुदगुदी बातें करनी पड़ती हैं हाथ में हाथ थामे।

कावेरी : कैसी बातें करते हैं, आप? हाय राम, साहब भी आए हैं। मैंने देखा ही नहीं। (**उठने का प्रयत्न करती है**)।

सुधाकर : आप न उठिए। हिलने-डुलने के लिए सख्त मनाही है अभी।

कावेरी : उठती नहीं। जरा टिककर बैठ जाती हूं तकिये के सहारे। अजी सहारा दीजिए न जरा?

नलू : रहने दीजिए, अप्पा! मैं पकड़ती हूं। **(कावेरी को सहारा देती है)**।

कावेरी : नलू, पांच-छह दिन इधर झांककर भी नहीं देखा। और दामाद जी तो ... लगता है ...

नलू : मां, हमें कितना भागना पड़ता है, आप लोग देखते नहीं? पिछले आठ दिनों में दस मेहमान आ लिए। घर के काम का बखेड़ा तो है ही, उस पर ये बाहर के झमेले। जी ऊब जाता है।

अप्पा : अरे बेटा, अपने देश का एक बहुत बड़ा बांध बना रहा है तुम्हारा पति। उसके साथ तुम भी हाथ बटा रही हो उस कार्य में। दामाद जी म्यूनिसिपैलिटी के बालिश्त-भर पुतले के नीचे मेंबरों की हाथ-भर लंबी सूची रहती है। वैसी ही सूची क्या बांध पर भी लगती है?

सुधाकर : (**हंसकर**) अभी तक तो ऐसी प्रथा नहीं है।

अप्पा : चल पड़े तो अपने नाम के साथ ब्रेकिट में इस जगदंबा का भी नाम रखने के लिए कहिएगा।

नलू : (**अलमारी में ढूंढ़ते हुए**) अप्पा ... जरा ...

अप्पा : क्या ढूंढ़ रही हो बेटी, अलमारी में? हमारी गंदी-मैली गृहस्थी भरी पड़ी है उसमें। नाहक तुम पर धूल पड़ेगी। कुछ खो गया है क्या?

नलू : मेरी बुनने की सलाइयां सुबह से नहीं मिल रही हैं। सारा घर छान मारा है, कल सुबह हमें नासिक जाना है, रास्ते में इनका स्कार्फ बुनने की सोच रही थी। सोचा, आपको बता दूं और सलाइयां भी तलाश कर लूं।

अप्पा : नासिक जाना है? और वापस कब आओगी?

सुधाकर : दो दिन के बाद, हमारे डिवीजनल इंजीनियर्स की मीटिंग है वहां।

अप्पा : और हमारा बोझा?

नलू : विठोबा करेगा आपकी देख-भाल, बता दिया है उसे।

अप्पा : हम घर में कहीं भी आ-जा सकते हैं न?

नलू : छिः, कैसी बात करते हैं, अप्पा? आपको किसने मना किया है? अरे हां—आज दोपहर को हाल में आप पेपर देख रहे थे न?

अप्पा : हां, दुनिया में क्या हो रहा है, जरा देखना भी तो चाहिए।

नलू : कोई आया था तब—कोई संदेश लेकर? इनका एक चपरासी आने वाला था।

अप्पा : कोई भी तो नहीं आया। तुम्हारी फौलादी अलमारियां तोड़कर कोई डाकू भाग जाता तो भी किसी को पता न चलता।

नलू : मां, तुम्हारा संदूक यहीं नीचे है न? परसों जब मैंने तुम्हारे कपड़े भेजे थे, शायद उनके साथ सलाइयां भी आ गई हों भूल से। चाबियां हैं तुम्हारे पास?

अप्पा : अरी, चाबियां खोए हुए ताले हैं हमारे। जरा-सा खींचोगी तो ताले के साथ-साथ कुंडी भी निकल पड़ेगी। मैं निकालूं ट्रंक बाहर?

नलू : नहीं, यहीं देख लेती हूं। (**चारपाई के पास बैठकर ट्रंक आगे खींचती है**)।

सुधाकर : (**बेचैन होकर**) रहने दो नलू ... मुझे लगता है—

नलू : (**ट्रंक खोलते हुए**) रहने क्या दूं? एक बार मन को तसल्ली हो जानी चाहिए—क्या-क्या भर रखा है, मां, संदूक में?

कावेरी : अरी, हमारा पुराना बाजार है वह। नहीं मिलीं न? ऐसी भुलक्कड़ है तू, नलू! रखी होगी कहीं और देखेगी कहीं।

अप्पा : दामाद जी, आपकी पत्नी यादगार की खाई है। बचपन से ही कुछ-न-कुछ खो देने में और फिर उसे ढूंढ़ने बैठने में इसने अपनी आधी आयु बीता दी होगी—क्यों मिलीं? क्यों बेकार उलट-पलट कर रही हो? नहीं हैं न?

नलू : (**ट्रंक बंद करके अंदर सरकाती हुई**) नहीं, सलाइयां नहीं हैं।

अप्पा : तो फिर और क्या खो गया है?

नलू : कुछ नहीं, सलाइयां। वहीं कहीं होंगी। चलिए—

अप्पा : तो सुबह जाओगे?

नलू : जी, मां, सुना है—सर्दी कड़ाके की पड़ने वाली है और एक ब्लैंकेट लाकर रख देती हूं जरा देर के बाद।

नलू और सुधाकर जाते हैं।

अप्पा : (**आरामकुर्सी पर बैठते हैं**) सलाइयां न मिलने के कारण काफी परेशान जान पड़ती है लड़की। पर इस ट्रंक में क्यों आएंगी वे?

कावेरी : अजी, जब कुछ खो जाता है तो पागल हो उठती हैं औरतें। अपने मोरवाडी जाने की बात आप उन्हें बताने वाले थे न?

अप्पा : हां, पर इस सलाइयों के झगड़े में याद ही नहीं रहा।

कावेरी : अच्छा हुआ, नहीं बताया, बाहर जाते समय बेकार परेशान होती बेचारी ... अभी से मौसम ठंडा होने लगा है।

अप्पा : शाल उढ़ा दूं?

कावेरी : अपने लिए नहीं कह रही हूं। जरा इधर आइए। मैं आपका स्वेटर अलमारी से निकाले देती हूं।

अप्पा : मैं ढूंढ़े लेता हूं। आपको डाक्टर ने ...

कावेरी : रहने भी दीजिए नजाकत। डाक्टर की बताई सभी बातों पर अमल नहीं किया जाता। कपड़ों की गठरी में बांध रखा है स्वेटर। आपको नहीं मिलेगा।

अप्पा : स्वेटर तो बेचारा मिल जाएगा, पर आपको चिंता है कि कहीं गठरी अस्त-व्यस्त न हो जाए। ठीक है—छड़ी दूं?

कावेरी : जी नहीं, केवल जरा हाथ का सहारा दीजिए।

अप्पा के सहारे कावेरी उठती है और अलमारी के पास जाकर स्वेटर निकालने लगती है।

कावेरी : और वह दवाई ले लीजिए पहले। ऐसी टालमटोल से काम नहीं चलेगा। लीजिए पहले।

अप्पा : हां—हां—लेता हूं, सरकार!

दवाई लेते हैं।

कावेरी : (**स्वेटर निकालकर अलमारी बंद करती है**) यह लीजिए स्वेटर। और अभी पहन लीजिए।

अप्पा : (**स्वेटर लेकर**) मोरवाडी की नयी गृहस्थी की यह तालीम दिखती है। पर, सरकार, मुझे इतनी सर्दी नहीं लग रही है।

कावेरी : मैं जो कह रही हूं, पहनिए। और सहारा दीजिए जरा। (**चारपाई पर जा बैठती है**)।

अप्पा : कावेरी, यह स्वेटर तुमने कब पूरा किया था, याद है कुछ?

कावेरी : हां।

अप्पा : उस दिन बंबई में मेरा सम्मान हुआ था। रसिकों ने मुझे थैली भेंट की थी। नट सम्राट की उपाधि दी थी। और उसी रात तुमने यह स्वेटर मुझे पहनाया था। उस समय कितना मजा आया था, तुम्हें याद है?

कावेरी : (**हंसकर मुंह फेर लेती है**) छिः! वह सब दोहराने की क्या जरूरत है?

अप्पा : हम दोनों तब भी बूढ़े थे, पर आज से कुछ कम। पीले पत्ते का किनारा थोड़ा हरा था। मैंने कहा था, उस थैली और उपाधि से अधिक इस स्वेटर का मुझे सुख है। मैंने तुम्हें अपने पास खींच लिया था ...

कावेरी : बस भी कीजिए अब।

अप्पा : उस समाधि में न जाने कितना समय निकल गया। समाधि टूटने के पहले ही डाक्टर महाशय की सिंह गर्जना कानों में पड़ी ... अप्पा साहब, रंगभूमि के ये राजे-रजवाड़े आपसे मिलने आए हैं, सामने देखता हूं तो केशवराव, नाना साहब, गणपतराव आदि कुछ खास-

खास लोग हार लिए खड़े थे दरवाजे पर। और इधर हमारी यह दशा ...

कावेरी : बस भी कीजिए।

अप्पा : स्वेटर में फंसा हुआ तुम्हारे कर्णफूल का कुंदा निकाले नहीं निकल रहा था, सब लोग हंस रहे थे, मजाक कर रहे थे, आखिर डाक्टर महाशय ने आगे बढ़कर धीरे-से आपरेशन किया और हमें छुड़ाया। (**दोनों हंसते हैं**) हनुमान जी की तरह पैदा होते ही ऐसा पराक्रम किया है इस स्वेटर ने। लेकिन वह भी बेचारा जर्जर हो गया है अब, अपने मालिक की तरह।

कावेरी : मोरवाडी जाते ही मैं नया स्वेटर बुनूंगी।

अप्पा : (**स्वेटर पहनकर**) पक्का?

कावेरी : हां, हां, बुनूंगी।

अप्पा : (**नाटकीय स्वर में**) शपथ लो—शपथ लो—शपथ लो!

दोनों हंसते हैं। उसी समय विठोबा प्रवेश करता है।

विठोबा : वाह! ऐसी टोनिंग हो तो अपने को ही नहीं नाटक को भी पुरस्कार दिलवा दूंगा मैं। कभी-न-कभी तो सफल हो ही जाऊंगा। अप्पा साहब, ये आपके कपड़े रहे। धोबी ने साहब के कपड़ों के साथ आपके भी कपड़े दे दिए। मालकिन ने कहा, अपने हाथ से अलमारी में रख दो।

अप्पा : तब की भंग उतर गई शायद?

विठोबा : (**अलमारी में कपड़े रखते-रखते**) जो चढ़ी नहीं उसके उतरने का सवाल ही पैदा नहीं होता, अप्पा साहब, मेरा सिर भन्ना रहा था चोरी के इलजाम से।

अप्पा : चोरी का इलजाम? कैसी चोरी? किस पर लगा इलजाम चोरी का?

विठोबा : (**पीछे लौटते हुए**) आज हम पर लगा, कल और किसी पर भी लग सकता है।

अप्पा : पागल, ठीक से बताएगा या नहीं?

कावेरी : किसकी चोरी हुई, विठोबा?

विठोबा : किसी से न कहने के लिए मालकिन ने कहा है, लेकिन केवल आपको ही बता रहा हूं। बड़ी बुरी बात हो गई आज अपने यहां।

अप्पा : क्या हुआ?

विठोबा : साहब की पूरी तनख्वाह चोरी हो गई।

अप्पा : तनख्वाह? चोरी हो गई?

कावेरी : तनख्वाह? चोरी हो गई?

विठोबा : साहब दोपहर को जब खाना खाने आए तो गोदरेज की अलमारी में उन्होंने अपना बटुआ रख दिया था। शाम को आकर देखते हैं तो बटुआ गायब।

अप्पा : गायब?

विठोबा : साफ गायब! मालकिन ने चारों ओर देख डाला। सब नौकर-चाकरों पर आरोप लगाया, गवाहियां लीं, तलाशी ली। पर कुछ भी पता न लगा, इसलिए मैंने कहा कि आप जाने वाले हैं मोरवाडी, पर लोग आपको चोरवाडी पहुंचा देंगे। मैं जाता हूं। बैग भरना है।

विठोबा जाता है। अप्पा एक बुत की तरह, धक्का खाए हुए-से कुर्सी पर जाकर बैठ जाते हैं।

कावेरी : कितने घपलेबाज हैं ये लोग! दरवाजे खुले रहे होंगे, कोई भीतर घुस आया होगा ...

अप्पा : (**चिल्लाते हैं**) सरकार! इसीलिए उसने हमारे कमरे की तलाशी ली, सरकार, हमने चोरी की, मैंने चोरी की। हमें आज चोर करार दिया गया, कावेरी!

कावेरी : मैं कहती हूं, बेकार ऊटपटांग तर्क न कीजिए, ऐसा हो ही नहीं सकता।

नलू ब्लैंकेट लिए अंदर आती है। दोनों एकदम चुप हो जाते हैं। नलू कावेरी के पैताने ब्लैंकेट रख देतीं है, और पूछती है।

नलू : उढ़ा दूं?

कावेरी : नहीं।

नलू बिना किसी की ओर देखे जाने लगती है।

अप्पा : (**उठकर**) नलू, मैंने—मैंने—चोरी की, तुम्हें शक है?

नलू : (**खड़ी हो जाती है। शांति से**) हां।

कावेरी : नलू!

अप्पा : इसीलिए तुमने अलमारी और ट्रंक देखा?

नलू : हां, इसीलिए।

अप्पा : (**एकदम टूटे-से**) नहीं। नामुमकिन। मेरी लाडली बच्ची—कह दे—झूठ है—नलू—मैं सह न सकूंगा। झूठ ही सही, पर कह दे कि जो कुछ तूने कहा वह झूठ है ...

नलू : मुझे झूठ बोलने की आदत नहीं।

अप्पा : तो तुम सचमुच समझती हो कि मैंने चोरी की?

नलू : (**क्रोध दबाते हुए**) अप्पा, मैं बेलवलकर नहीं, कार्लेकर हूं। वे पैसे

उनके थे, अलमारी से उन्हें यों निकाल लेने का आपको कुछ भी अधिकार नहीं। आपको जरूरत थी तो मुझसे मांग लेते, आप। चोरी करके अपने और मेरे दोनों के मुंह पर कालिख पोत ली, आपने।

अप्पा : मैंने चुराए रुपये? मुंहजली!

कावेरी : मेरी बात सुनिए। यों क्रोध न कीजिए।

अप्पा : क्रोध न करूं? पृथ्वी पर बेफिकरी से घूमने वाले भगवान की पीठ में छुरा भोंककर उसका खून करने वाले लोगों को अपने सामने देखते हुए भी क्रोध न करूं? मैंने चुराए, रुपये? सरकार, वह जानती है कि मेरे क्रोध को पैर नहीं, हाथ नहीं, वह लंगड़ा-लूला है; एक कटे हुए सूअर के धड़ के समान है जो नाले में पड़ा तड़पता रहता है। मैंने रुपये चुराए? नहीं। सरकार, मैं गुस्सा नहीं करूंगा? गुस्सा करके फायदा भी क्या है? मैं गुस्सा नहीं करूंगा, पर तुम्हें बताए देता हूं, मैं रोऊंगा भी नहीं। आंखों में आंसू आ जाएं तो भी सलाइयां भोंक लूंगा संभाजी की तरह। पर तुम जैसी मां के सामने रोऊंगा नहीं, मैंने रुपये चुराए? मैंने रुपये चुराए?

नलू : (**आपा खोकर चिल्ला पड़ती है**) जी हां ... आपने चुराए। आपने चुराए। आपने चुराए।

हाथों में सिर दबाए ताव में बाहर चली जाती है। कावेरी 'नलू, नलू' कहते हुए छटपटाकर उठती है और उसके पीछे जाने लगती है और आखिर दीवार का सहारा लेकर खड़ी हो जाती है।

अप्पा साहब क्षण-भर निश्चल खड़े रहते हैं, और फिर विक्षिप्त की तरह डगमगाते कदमों से कुर्सी की ओर जाते हैं। क्षण-भर कुर्सी के सहारे खड़े रहते हैं और फिर कुर्सी पर बैठ जाते हैं।

अप्पा : मैं चोर हूं (**सीना पीटकर**) मैं चोर हूं। मैं अप्पा बेलवलकर—नट सम्राट—जिसने लाखों रुपये गुलाल की तरह उड़ा दिए वह गणपतराव बेलवलकर चोर ठहराया गया—अपने बच्चों के घर में—हे भगवान! मैं और सब कुछ सहन कर लेता ... लेकिन यह ...

कावेरी : (**दीवार का, चारपाई का सहारा लेती उनके पास आती है और उनके कंधे पर हाथ रखती है**) सुनते हो?

अप्पा : (**क्षीण स्वर में**) क्या कहती हो?

कावेरी : सारा संसार हमारे लिए समाप्त हो चुका है अब। हम ही दोनों शेष बचे

हैं। केवल हम दोनों। एक-दूसरे के लिए। मेरे सिर की कसम है, जो मैं कहती हूं मान लीजिए।

अप्पा : (**जमीन की तरफ टकटकी लगाए**) मेरी तो कुछ भी समझ में नहीं आता, सरकार!

कावेरी : मेरा कलेजा फटा जा रहा है। पर मैं जीऊंगी— आपके लिए। मैं ठीक होती तो पल-भर भी यह सहन न करती। जैसे नंदा के घर से निकल पड़ी उसी तरह आपके साथ इसी पल निकल पड़ती। लेकिन इस बीमारी से मैं विवश हो गई हूं, लाचार हो गई हूं। मुझे अपने पर भरोसा नहीं है। इसलिए कहती हूं ... सुनते हैं न? आज की रात हम यहीं काटेंगे। किसी को साथ लेकर कल सुबह मोरवाडी चल देंगे। मैं बंगले में नलू के पास होकर आती हूं। एक बार उससे पूछ लेती हूं, उसके मन में क्या है। हम घर छोड़ने के लिए तैयार हैं, पर ऐसा कलंक हमारे माथे पर न लगाओ ... मैं पैरों पर सिर रखकर उससे विनती करूंगी ... महारानी, तुमसे कभी कुछ नहीं मांगा, भविष्य में भी नहीं मांगूगी। लेकिन आज आंचल पसारती हूं, तुम्हारे सामने। कोई आदमी हमारे साथ दो और हमें मोरवाडी तक पहुंचाने की व्यवस्था करो। हम अपनी बदसूरत बूढ़ी शक्लें तुम्हारी गृहस्थी में फिर कभी नहीं दिखाएंगे। लेकिन आप चुपचाप बैठे रहेंगे यहां! मेरी कसम है, अपना दिमाग खराब नहीं करेंगे। जरा आराम होते ही मैं चाहे जितनी मेहनत-मजदूरी करूंगी। मोरवाडी पहुंचकर बड़े मजे से मंदिर बनाऊंगी अपने देवता के लिए। यह सारा अमंगल स्वप्न हम भूल जाएंगे। मैं अपने-आपको बांझ मानकर चलती हूं। जब तक आपका साथ है, मुझे किसी बात की भी परवाह नहीं। मैं मन से नहीं टूटी हूं ... किसी भी अंधकार से आपके लिए रास्ता निकाल सकती हूं। पर ... मेरी इतनी बात मान लीजिए ... आप शांत रहिए ... मानेंगे न?

अप्पा : मानूंगा।

कावेरी : मैं भीतर हो आती हूं।

अप्पा : लेकिन कावेरी, तुम्हें ...

कावेरी : दीवार के सहारे-सहारे चली जाऊंगी। मेरी चिंता न कीजिए। अभी आती हूं। मैं जानना चाहती हूं।

कावेरी धीरे-धीरे दीवार के सहारे भीतर जाती है। अब भी अप्पा साहब की दृष्टि जमीन पर गड़ी हुई है।

अप्पा : क्यों जी रहे हैं हम!

अंधेरा होता है। केवल अप्पा पर एक रोशनी है।

अप्पा : (आगे आकर)

To be or not to be that is the question
जिएं या मरें
एक ही सवाल, है
इस संसार के घूरे पर
जूठी पत्तलों का टुकड़ा बन
जिऊं बेशर्म लाचार आनंद से
या फेंक दूं इस देह का चिथड़ा
जिसमें वेष्ठित हैं अनुभूति की यातनाएं
मृत्यु के काले स्याह गर्त में?
या कर दूं सबका अंत
एक ही प्रकार से
मेरा, तुम्हारा, इसका और उसका भी।
मृत्यु का महासर्प
जीवन को इस तरह डसे
कि बाद में आने वाली बेहोशी में
न आए जागृति का किनारा
कभी भी—
लेकिन उस बेहोशी में भी
पुनः स्वप्न आए तो
तो—तो
यहीं मेख हैं।
नये स्वप्न के अपरिचित प्रदेश में
घुसने का साहस नहीं होता
इसीलिए हम सहते हैं
अपनी पुरानी जागृति।
सहते हैं प्रेतों की निर्जीवता-से
स्वाभिमान पर होने वाले अत्याचार
अस्तित्व के भीतर विद्यमान सत्व की विडंबना
और अंत में करुणा का कटोरा लिए
खड़े हो जाते हैं गर्दन झुकाए
अपने कातिलों के ही द्वार।
भगवन, क्यों तुम हुए इतने कठोर
एक ओर, जिन्हें पैदा किया हमने

वे भूल जाते हैं हमें
और दूसरी ओर, जिसने हमें जन्म दिया
वह तुम भी भूल जाते हो हमें
फिर भला बदसूरत हड्डियों का पिंजर लिए
हे करुणाकर,
हम बूढ़े लोग
किसके चरणों पर सिर पटकें?
किसके ... चरणों पर ... किसके ...?

कुर्सी पर बैठ जाते हैं, अंतिम शब्द के साथ अंधेरा दूर हो जाता है। अप्पा खोए-से कुर्सी पर बैठे हैं। नलू गर्दन झुकाए दरवाज़े के पास खड़ी है। कावेरी बिछौने के किनारे पर हताश-सी टिकी हुई है और सुधाकर दूसरी ओर की खिड़की में से शून्य दृष्टि से बाहर देख रहा है—ऐसा दृश्य रोशनी में प्रकट होता है। एक दीर्घ शब्द विराम। घुटन पैदा करने वाली स्तब्धता।

कावेरी : (**बेचैनी से**) एक बार मेरी भी बात सुन लीजिए ...

अप्पा : क्या कहना चाहती हो?

कावेरी : लड़की को गलतफहमी हुई। बटुआ अलमारी में ही मिला, अभी-अभी। पर बेटी घबरा गई थी। अपने हार के रुपये ट्रंक में थे। इन रुपयों के बारे में वह नहीं जानती थी। उसे लगा ...

अप्पा : (**भड़ककर**) उसका बाप चोर है, उसकी मां चोर है और वे दोनों बूढ़े हैं, लंगड़े-लूले हैं, लावारिस कुत्ते की तरह उसके टुकड़े पर पल रहे हैं। उनके मुंह पर आरोप का गंदा कीचड़ फेंकने पर भी वे क्या बिगाड़ लेंगे उसका? सरकार, इन दो कौड़ियों की कठपुतलियों को न्याय के आसन पर बिठाकर इनसे इंसाफ मांगना तो दूर, निरपराधी साबित होने की भी मेरी इच्छा नहीं। कमबख्त, मराठी रंगभूमि के इस सार्वभौम राजा नट सम्राट बेलवलकर की, जो गणपतराव जोशी का पटशिष्य है, खाडिलकर-गडकरी जैसे देवताओं ने जिस कलाकार की पीठ पर हाथ रखा है, जो लाखों लोगों की वाह-वाह पाकर कुबेर से भी अधिक धनी तथा इंद्र से भी अधिक भाग्यवान है, जो रंग-देवता का पुजारी है—उसकी तू यों विडंबना करती है? इसलिए कि वह तेरा बाप है? इसलिए कि उसके पास रुपया नहीं है? इसलिए कि बुढ़ापे के कारण वह असहाय है?

नलू : (**दौड़कर जाती है और उनके पैरों पर सिर रख देती है**)। अप्पा, मुझसे

भूल हुई। मुझे क्षमा कीजिए, अप्पा! अपनी लाडली गुड्डी को क्षमा कीजिए।

अप्पा : **(एक ओर हटकर)** खबरदार, मुंहजली, जो ये शब्द मुंह पर लाई। तू मेरी एक लाडली गुड़िया थी ... थी ... पर अब कहां है वह? भूल थी मेरी वह। एक सुंदर सुकुमार बेटी थी। एक खरगोश-सा बेटा था, पर वास्तव में वे मेरे कुछ भी नहीं थे। आकाश का बोझा उठाने वाले दिग्गजों से पूछकर देख। वे बतलाएंगे, कोई किसी का नहीं होता। अंतरिक्ष में भटकने वाली कोई आत्मा हमारी वासना की सीढ़ी से पृथ्वी की मिट्टी पर उतरती है और हम समझते हैं, हम बाप हो गए– मां हो गए। लेकिन झूठ, बिल्कुल झूठ। हम केवल सीढ़ी हैं। केवल सीढ़ी। (**कुर्सी पर गिर पड़ते हैं**)।

सुधाकर : अप्पा साहब, मैं आपसे प्रार्थना करता हूं, आप ...

कावेरी : (**उठकर अप्पा की ओर आने का प्रयत्न करती है**) मैं कहती हूं– एक बार मेरी बात मान लीजिए– यह सब अब मुझसे नहीं सहा जाता– सीने में टीस उठ रही है ... लेकिन ... आज की रात हम लोग ... यहां काटें। कल सुबह हम– मोरवाडी चले जाएंगे ... मैं हारी नहीं हूं– मैं वहां आपके लिए– आपके लिए ... हे राम!

सीने में असह्य पीड़ा होने के कारण गिर पड़ती है।

नलू : मां! (**दौड़ती है**)।

अप्पा : सरकार! सरकार! ...

उसकी ओर दौड़ते हैं।

पर्दा

तीसरा अंक

पहला दृश्य

नलू का घर। दीवानखाना। दोपहर का समय। नलू एक आरामकुर्सी पर चिंतित मुद्रा में बैठी है। सुधाकर फोन पर बात कर रहा है।

सुधाकर : (**फोन पर**) हलो—एक्सचेंज—मैं कार्लेकर बोल रहा हूं। देखिए, जोशी जी, मैंने बंबई काल बुक किया है—जी हां—अर्जेंट ... आधा घंटा हो गया। अब तक मिल जाना चाहिए था। जी हां ... नंदा बेलवलकर या मिसेज बेलवलकर ... कोई भी हो—दस-पंद्रह मिनट में? ... थैंक्यू! जरा आप स्वयं ही प्रयत्न कीजिए, इट्स वेरी-वेरी अर्जेंट! ओ.के.

रिसीवर रख देता है।

नलू : क्या कह रहे हैं?

सुधाकर : लाइन खराब थी। अब ठीक हो गई है। कहते हैं, दस-पंद्रह मिनट में मिल जाएगा।

नलू : जरूरत के समय इनकी लाइन हमेशा खराब रहती है। तो भी गनीमत है, बांध की बस्ती है। एक बार और पुलिस से पूछ देखिए।

सुधाकर : (**फोन पर**) हलो—पुलिस स्टेशन?—जाधव साहब हैं? हलो—इंस्पेक्टर साहब, मैं हूं कार्लेकर—कुछ पता लगा? ... अभी नहीं!—हां-हां मैं—जानता हूं—नहीं, हम दोनों शहर से बाहर गए हुए थे—शायद रात को ही गए हों—जी ... ठीक है! ठीक है! थैंक्यू!

सुधाकर : (**कुर्सी पर बैठ जाता है**) आस-पास की सभी चौकियों और गांवों में खबर कर दी है उन्होंने! एस.टी. से भी पूछताछ कर ली है। लेकिन कह रहे हैं कि सब ओर से रिपोर्टें आने के लिए अभी कुछ समय लगेगा।

नलू : रेल से तो जा नहीं सकते! हमने स्टेशन पर सबसे पूछ लिया। स्टेशन मास्टर उन्हें जानते भी हैं। उनके ध्यान में जरूर आता।

(**फोन की घंटी बजती है**)

सुधाकर : (**फोन पर**) हलो— नंदा— मैं सुधाकर बोल रहा हूं राहीनगर से। हां, एक बुरी खबर है, नंदा! अप्पा आज सुबह से घर से गायब हैं— हम यहां नहीं थे ... सुबह विठोबा को पता चला ...नहीं, किसी से कुछ भी नहीं कहा ... हां, पुलिस को खबर कर दी है ... हम भी तलाश कर रहे हैं ... भ्रमिष्ठ तो थे ही— उस दिन तुम आए थे तो देख ही लिया था तुमने ... पर सोचा ही न था ... यहीं है— बड़ी पस्त है वह— पंद्रह दिन में यह दूसरा प्रसंग ... अच्छी बात है ... उधर आ जाएं तो ... हां, फोन कर देना ... खबर दूंगा ... क्या हुआ सुहास को? रट लगा रखी है... नहीं, आने की जरूरत नहीं ... हां, आएंगे हम ... अच्छी बात है ...

रिसीवर रखकर कुर्सी पर बैठता है।

नलू : मुझे लगता है, आजकल में पता न लगे तो हम ही बंबई चले जाएं ... शायद कार आ गई। विठोबा ...!

विठोबा : (**भीतर से**) आया, मालकिन!

ड्राइवर आता है।

सुधाकर : क्यों?

ड्राइवर : कहीं पता नहीं लगा, साहब।

सुधाकर : कहां तक देखा तुमने?

ड्राइवर : दोनों सड़कों पर बीस-पच्चीस मील तक देख आया। आस-पास के गांवों में भी पूछा। किसी ने उन्हें नहीं देखा।

सुधाकर : अच्छी बात है। जाओ तुम! विठोबा ...!

ड्राइवर जाता है।

विठोबा : (**आकर**) जी, साहब!

नलू : ये क्या, बैग कैसा ले आए?

सुधाकर : मैं तुम्हें बताना भूल गया, नलू! यह नौकरी छोड़ रहा है। कुछ देर पहले हिसाब ले गया अपना।

नलू : नौकरी छोड़ रहे हो?

विठोबा : छोड़ दी है, मालकिन, और यह बैग मेरा अपना है। इसमें के कपड़े भी मेरे हैं। देखना चाहें तो खाली करके दिखाए देता हूं।

नलू : तुम होश में तो हो?

विठोबा : माफ करें, मालकिन, लेकिन ...

नलू : कहां जाओगे, तुम?

विठोबा : अभी फिलहाल तो गांव-गांव भटकूंगा, अप्पा साहब की खोज में।

नलू : हमसे अधिक तुम्हें चिंता है अप्पा को ढूंढ़ने की? और पुलिस से ज्यादा अक्ल है?

विठोबा : माफ करें, मालकिन! अप्पा साहब को आप अपने पिता के रूप में देखती हैं, हम अपने राज्य के सम्राट के रूप में देखते हैं उन्हें। शिवाजी महाराज की मृत्यु होते ही उनका कुत्ता उनकी चिता में कूद पड़ा था, मालकिन! उनका लड़का या और कोई रिश्तेदार नहीं कूदा। ये इकरार, ये कायदे अलग होते हैं। और जहां तक पुलिस की बात है, मैं समझता हूं कि जो वे न कर पाएं, शायद मैं कर सकूं। सख्ती की अक्लमंदी से, भक्ति की मूर्खता भी कभी-कभी अधिक सफल साबित होती है —यह मेरा चुराया हुआ वाक्य है। ऐसी चोरियां करता हूं मैं और, मालकिन, चोर की चाल जिस तरह चोर समझता है, उसी प्रकार नट की चाल शायद नट ही पहचान सके।

सुधाकर : विठोबा, तुम्हें जाना हो तो जाओ। पर मैं नहीं समझता तुमने ठीक से विचार किया है।

विठोबा : अधिक नहीं, पर थोड़ा किया है। अधिक विचार करने से मनुष्य लट्टू-सा अपनी जगह घूमने लगता है। गड्ढा पड़ता है, पर प्रगति नहीं होती ... यह भी वैसा ही वाक्य है ... दोपहर तक रुका रहा मैं, साहब! फिर तय कर लिया कि अब रुके रहने से कोई फायदा नहीं, आपसे बात की और फिर कलवणकर साहब को फोन किया। मैं नाटक में काम नहीं करूंगा, उन्हें बता दिया। वे भी खुश हुए। क्योंकि उनके साले साहब यह काम करना चाहते हैं। तो अब कोई बंधन शेष नहीं है। आपकी कृपा से कुछ रकम पास है। जब तक वह समाप्त नहीं होगी, गांव-गांव घूमूंगा। पता चल गया तो तुरंत आपके पास सूचना भेजूंगा ... नंदा साहब के पास भी खबर भेजूंगा ... अच्छा तो मैं चलता हूं साहब, मालकिन ... साढ़े चार की बस पकड़नी है। आपने मुझे निभा लिया, आभारी हूं। नमस्ते!

विठोबा जाता है। फोन की घंटी बजती है। सुधाकर रिसीवर उठाता है।

सुधाकर : हलो— कौन, जाधव साहब? फोटो चाहिए? और ... अच्छा ... मैं आता हूं। उधर ... फौरन आता हूं ... (**रिसीवर रख देता है**) नलू, फिर एक बार थाने जाना है। जाधव साहब इंतजार कर रहे हैं। मैं हो आता हूं।

कोट उठाए सुधाकर बाहर जाता है।

नलू सुन्न-सी बैठी है। बाहर से गड़गड़ाहट सुनाई पड़ती

है। नलू एकदम चौंकती है तथा उठकर दरवाजे की ओर भागती है और चीख-सी पड़ती है।

नलू : संभलकर जाओ ... सुधाकर—संभलकर जाओ ... बड़ा भारी तूफान आने वाला है—पानी बरसने वाला है—संभलकर जाओ ...

नलू चिल्लाती बाहर जाती है। बादलों की गरज के दौरान अंधेरा होता है। अगले दृश्य का पर्दा उठने तक बरसाती आंधी की अनेक आवाजें सुनाई देती रहती हैं।

पर्दा

दूसरा दृश्य

किसी एक गांव के पास वाला जंगल। इस ओर एक टेढ़ा-मेढ़ा लाल बजरी का रास्ता। रास्ते की परली ओर पेड़ों के पास एक चट्टान दिखाई दे रही है। आकाश में बादल छाए हैं और हल्की वर्षा हो रही है। बिजली चमक रही है। समय दोपहर का। पर सूरज की रोशनी का कहीं पता नहीं। अप्पा उल्टे-सीधे स्वर में एक गाना गाते हुए प्रवेश करते हैं। उनके कपड़े— धोती, कमीज तथा लंबा कोट— मैले हैं, कीचड़ से गीले हो रहे हैं। सिर पर टोपी नहीं है।

अप्पा : (गाते हैं)

नन्हे मुन्ने
प्यारे गुड्डू
नन्हे-से पैरों में
चांदी के पैंजन।
पानी में ऐसे
आंधी रहते
कहां चला है
ठुमक-ठुमक कर
मेरा राजा!
बादल गरजे
बिजली चमके
नदी में बैठा
कालिया काला
कसम तुम्हें है
मेरे, मुन्ने
बाहर न जा यों
नन्हे राजा!

आधा गाना छोड़कर क्षण-भर रुकते हैं। उसके बाद आसपास की झाड़ियों-पेड़ों की ओर तथा आकाश की ओर देखकर किसी फेरी वाले की तरह चिल्लाते हैं।

कोई देगा घर, क्या देगा घर
एक तूफान को
कोई देगा घर क्या देगा घर?
वह तूफान जो छप्पर और दीवारों से हीन
मनुष्य के प्यार और ईश्वर की दया-विहीन
जंगल-जंगल भटक रहा है
जहां से कोई उठा न सके
ऐसा स्थान ढूंढ़ रहा है—
कोई देगा घर, क्या देगा घर?
सच कहता हूं, भाइयो,
तूफान अब थक चुका है,
पैड़-पौधों और पहाड़ी घाटियों में
आधे से अधिक टूट चुका है।
सागर की लहरों पर
दावानल की लपटों पर
टक्करें मार-मार कर
तूफान अब हार चुका है
जले-टूटे पंखों में शक्ति समेट
उड़ना चाह रहा है
सच कहता हूं, भाइयो,
तूफान का तूफानीपन ही
अब उसके लिए भारी है—
कोई देगा घर, क्या देगा घर?
तूफान को न चाहिए महल
रजवाड़े का सेट नहीं
उपाधि नहीं हार नहीं
थैली की भेंट नहीं
चाहिए केवल एक छोटा-सा घर
पंख समेटे सिर ढकने के लिए
चाहिए एक आरामकुर्सी
तूफान को, बैठने के लिए

और न भूलना, भाइयो,
एक तुलसी वृंदावन भी चाहिए उसे
पिछले आंगन में सरकार के लिए।
सरकार ... (**रोने लगते हैं**)
सरकार ...
सरकार ...।

पत्थर पर बैठ जाते हैं। अकस्मात रोना बंद हो जाता है। जेब से कागज का एक लिफाफा निकालते हैं और उसमें से कुछ निकालकर खाने लगते हैं। इसी बीच दो-तीन देहाती लोग उनकी ओर देखते हुए जाते हैं। एक किसान और उसकी पत्नी सिर पर टोकरियां उठाए जाते हैं। देखते हैं, जरा आगे जाकर आपस में कानाफूसी करते हैं और लौट पड़ते हैं।

किसान : बुढ़ऊ, पानी बरसत अहै, तब हिया काहे का बैठा अहा! का राह भुलाय गा अहा?

अप्पा : (**होश में आकर**) तुमने मुझसे कुछ कहा?

किसान : हां, हम यहै पछैन तुह से कि राह भुलाय गा अहा?

अप्पा : नहीं, नहीं, रास्ता नहीं भूला! मैं राह देख रहा हूं यहां।

स्त्री : केह कै राह देखत अहा, बुढ़ऊ दादा?

अप्पा : अपनी पत्नी की! मैं सरकार कहता हूं उसे।

स्त्री : का वह पाछे आवति अहैं?

अप्पा : वह पीछे नहीं रही। मैं पीछे रहा हूं! लेकिन आगे जाकर भी वह पीछे आए बिना नहीं रहेगी। क्योंकि अभी वृंदावन बनवाना बाकी है।

किसान और उसकी पत्नी आपस में कानाफूसी करते हैं।

किसान : बुढ़वा, वह मेंडे के लगे हमार कुरिया अहै। चल के थोरिक तपता ताप लिया। तनिक हाथ-गोड़ गरमाय जाय। लरके निहार ल्यैहैं कि बूढ़ा आवति है।

स्त्री : भय्या, देखत अहो, इतना जोर का पानी बरसत अहै। काहे का इहां बैठा अहा? देखत अहा फिर करिया-करिया बादर उठत अहै! कौनो पता नाही अहै कि कब बरसे लागै? तनिक आराम कर लिया। दुई कौर हमारे सबके साथ बैठ के खाय लिया। तब तक बूढ़ी आय जैहे। तब चला जाय। जहां जाय का होये।

अप्पा : पत्नी के लौटने पर? अरे भई, वह अब वापस नहीं आएगी! भगवान के घर गए हुए लोग फिर पृथ्वी पर वापस आए? किसलिए? ऐसी

कौन-सी चीज है पृथ्वी के पास? अरे भाई, सितारों की सभा में एक बार पृथ्वी से पूछा गया, तुम्हारे पास कौन-सी अमूल्य वस्तु है? उसने बड़े गर्व के साथ अपने आंचल से मनुष्य निकाला और सबको दिखाया। सब सितारे खिलखिलाकर हंसने लगे। वह साढ़े पांच फुट का एक बड़ा-सा झींगुर था ... गंदगी से भरा हुआ। मनुष्य कब झींगुर बना, बेचारी पृथ्वी को पता नहीं। अब क्या बचा है उसके पास?

स्त्री : (**आपस में**) हम कहात रहै न कि बुढ़ौऊ कछु पागल अहैं।

किसान : तौ हमरे साथी ना चलबा कर? देखा पानी फिर बरसै लाग, लिया इहैं कमरिया ओढ लिया। आव चली घरै चला, दुई रोज हमरे इहां रुक जा और रूखी-सूखी जौन हम सब खावैं वहै तुम्हको खवऊबै, फिर अपने लड़कन के लगे चला जाया।

अप्पा : भाई, तुम लोग इतने भले आदमी; फिर मेरे बाल-बच्चों का नाम क्यों लेते हो? जाओ भाई, सुख से अपने घर जाओ! जल्दी जाओ। नहीं तो वे जंगल के भूत, जानते हो न? दिन डूबते ही रास्ते समेट लेते हैं और रख देते हैं छिपाकर! फिर तो हम कहीं जा ही नहीं सकते। जाओ ...

किसान : लिया बाबा, हम जात अही।

अप्पा : और सुनो, वहां पहुंचने पर उस बंदर से कहना, अब बस करो, अपना खिलवाड़।

किसान : बांदर? कौन बांदर?

स्त्री : बांदर? कौन बांदर?

अप्पा : आश्चर्य है! अभी तक तुमने नहीं सुना? अजी, विराट आकाश के सामने एक बंदर अजीब खिलवाड़ कर रहा है। शेक्सपीयर ने स्वयं मुझसे कहा है। ऐसा गंदा और वाहियात खिलवाड़ कि शैतान देखकर हंसने लगा है और भगवान की आंखों में आंसू आ गए हैं। भगवान की आंखों में आंसू आ जाना कोई मामूली बात नहीं है, जनाब! भगवान एक बार रोने लगे तो सारी पृथ्वी बह जाएगी बाढ़ में। बंदर से कहो, वह जो चाहे करे पर भगवान को न रुलाए। याद रखोगे?

किसान : हम याद रखबै, तू तो ना चलवा हमरे साथ?

अप्पा : नहीं! जाओ अब! (**वे दोनों जाते हैं। अप्पा उठकर जोर से चिल्लाते हैं**) और संभलकर जाना। चारों ओर—जानवर छूटे हुए हैं।
—जानवर छूटे हैं
चौकस रहो
—पिंजरों के जानवर, गुफाओं के जानवर

वन के जानवर, मन के जानवर
रौंधते हैं मंदिर, इमारतें टूटती हैं
पृथ्वी पर कब्जा पाने
प्रज्ज्वलित क्रोध से
इधर-उधर भाग रहे—
चौकस रहो!
भयानक जानवर, भाइयो,
भयानक जानवर
जीभों से चू रही आग
सींगों पर लटक रही आंखें
दांतों पर अटक रहा बदसूरत हास्य
निगलकर ज्वाला प्रतिशोध की
तूफान की तरह दौड़ रहे हैं इधर-उधर—
चौकस रहो!
गिरने दो मंदिर, ढहने दो इमारतें
होने दो नगर नष्ट, बागों को जलने दो।
नंगी जमीन पर पड़ा है एक
मानव का शिशु
गुलाबी छबीला शिशु
देखता आकाश को हंस रहा
सूरज की किरणें पकड़ने को
हाथ उछाल रहा
संभालो उस शिशु को
केवल उस शिशु को
चौकस रहो ...!

अंतिम शब्द जोर-जोर से कहते हुए जंगल में चले जाते हैं।

पर्दा

तीसरा दृश्य

बंबई।

एक नाट्यघर का परिवेश! जहां लोगों की अधिक आमद-रफ्त नहीं है, ऐसे नाट्यगृह के अहाते का एक भाग। पिछली ओर दूर नाट्यगृह का कुछ बाहरी भाग तथा उस पर लगे बोर्ड, बत्तियां आदि सजावट दिखाई दे रही है। सामने की ओर एक चबूतरा है और उसके पीछे हरियाली है।

चबूतरे के एक ओर एक बिजली का खंभा है।

समय— सायंकाल।

बूट पालिश करने वाला एक लड़का ... लगभग सोलह-सत्रह साल की आयु ... किसी सिनेमा का गीत गाता आता है। उसके हाथ में जूते की एक जोड़ी है। उल्टी-सीधी तानें खींचता वह चबूतरे के पास आता है। पीछे मुड़कर ध्यान से देखता है और फिर नीचे बैठकर जूते पालिश करने लगता है।

बैठे-बैठे वह फिर एक बार मुड़कर पीछे देखता है तथा एकदम उठकर विंग की ओर जाता है। वहां से जोर से चिल्लाता है।

लड़का : बाबा, पी लिया पानी? ओ लड़के, बाबा के आगे कहां घुस रहा है? मेरे बाबा को परेशान करेगा तो साले, हाथ तोड़ दूंगा तेरा। चल हट, भाग यहां से! ठहरो बाबा, मैं आया।

अंदर जाता है और अप्पा का हाथ पकड़कर उन्हें ले आता है। अप्पा का कोट। अब गायब है। गंदी धोती लुंगी की तरह लपेटी हुई है। कमीज कई जगहों से फटी हुई है। सिर के तथा मुंह के बाल बुरी तरह से बढ़े हुए हैं। हाथ में एक

पेड़ की टहनी है। पीठ झुक गई है, आंखों से कम सूझता है।

लड़का : (**चबूतरे पर कपड़ा मारते हुए**) बाबा, बैठो यहां इस चबूतरे पर जरा। बेकार भटकते रहते हो और सिर तपाते हो। ऐसे काम नहीं चलेगा। बैठो यहां।

अप्पा : (**बैठते हुए**) हां, बैठता हूं, राजा, पर यहां बैठूं तो कोई नाराज तो न होगा?

राजा : यह रास्ता है! किसी के बाप का घर नहीं। यहां अपना राज है, बाबा! तुम्हें कोई रोकेगा तो मुंह तोड़ दूंगा साले का।

अप्पा : अरे, यों नाराज नहीं होते, राजा!

राजा : बाबा, ये साले रहते हैं मुलायम घरों में चबूतरों की तरह और हम रास्ते पर टिक जाएं तो हमें ठोकरें मारने आ जाते हैं। गुस्सा क्यों न आए? खैर छोड़ो यह सब! तुम सिगरेट पीते हो?

अप्पा : हां, हां ...

राजा : बढ़िया है ... चार मीनार! (**सिगरेट देता है और स्वयं भी एक लेता है। दोनों सिगरेट सुलगाकर**) चार कश खीचों। तब तक मैं जूता पालिश करता हूं। देर हो जाएगी तो वह पकौड़ी वाला चीखेगा साला। चुपचाप बैठ जाओ! अब कहीं न जाना। (**बैठकर पालिश करने लगता है**)।

अप्पा : नहीं जाऊंगा। लेकिन, राजा, पीछे यह बड़ी इमारत कैसी?

राजा : (**काम करते-करते**) वह थिएटर है बाबा, नाटकों का! बहुत लोग आते है यहां! पर सब गाड़ी वाले और कोठी वाले। टिकट ही इतना महंगा होता है? लेकिन हिम्मत करके एक बार हमें देखना है कि नाटक होता कैसा है? इस कंपनी के नाटक, सुनते हैं, बड़े टाप होते हैं। तुमने कभी नाटक देखा है, बाबा?

अप्पा : और कुछ भी तो नहीं देखा राजा, मैंने! इसीलिए इतनी गड़बड़ हो गई ... कौन-सा नाटक चल रहा है यहां?

राजा : नाटक का नाम—वह देखो बड़ा बोर्ड लगा है वहां! (**उठकर पढ़ता है**) ओ—थे—लो। (**हंसता है**) डबल ल लिखा है साले ने! उसका बाप भी पढ़ सकता है डबल ल को? और कल के नाटक का नाम है जू-ली-यस-सी-जर—इसमें भी गलती की है साले ने! (**बैठता है**) श्रीधर लिखने की बजाय सीजर लिख रखा है। विचित्र नाम रख देते हैं। परसों यहां एक नाटक चल रहा था, बाबा, क्या बढ़िया नाम था! बीवी की हार मियां की जीत। ऐसा टायटल होना चाहिए। इस नाटक

की स्टोरी जानते हो तुम, बाबा?

अप्पा : जानता हूं, बहुत बढ़िया स्टोरी है, बेटा, आथेल्लो नाम का एक ज़ंगली आदमी है।

राजा : डबल ल?

अप्पा : हां, डबल ल! बड़ा-बड़ा बहादुर, सच्चा और दिलदार है वह। रोम देश का वह राजा बन जाता है। ना-ना ... छोटे-से राज्य का सेनापति बन जाता है वह! रोम का राजा है सीजर!

राजा : श्रीधर नहीं?

अप्पा : नहीं, सीजर।

राजा : यानी हम ही गधे हैं! अच्छा आगे?

अप्पा : उस आथेल्लो ने एक अमीर सरदार की लड़की से विवाह किया। छुपकर! बाप को बिना बताए!

राजा : यानी बाहर ही बाहर लाइन पार हो गया।

अप्पा : विवाह कर लेने के बाद उसे अपनी पत्नी पर संदेह होने लगा।

राजा : छिनाल निकली?

अप्पा : वह बेचारी सीता-सावित्री जैसी सती साध्वी थी। लेकिन उसके एक नौकर ने उसके मन में विष भर दिया। वह तरक्की चाहता था और मालकिन को भी हथियाना चाहता था।

राजा : साला! इन सब विलियनों को मार-मार कर कचूमर निकाल देना चाहिए। जो नहीं करना चाहिए वह करते हैं—मरें! (**पालिश करना समाप्त होता है। जूता लिए खड़ा हो जाता है**) बाबा, इस पकौड़ी वाले को बूट दे आता हूं। नाटक के इंटरवल की भी घंटी बजने लगी। देखता हूं, यदि कोई और ग्राहक मिल जाए। तुम यहीं बैठे रहो। अभी आता हूं मैं—पालिश... पालिश ...

लड़का चिल्लाता हुआ दूसरी ओर जाता है। थिएटर की ओर थोड़ी-सी भीड़ होती है। अप्पा सिगरेट की कश खींचते हुए चारों ओर देखते रहते हैं। दो दर्शक बातचीत करते चबूतरे के पास आते हैं और लिफाफे के वेफर्स खाते एक ओर खड़े रहते हैं।

एक दर्शक : (**व्यस्क**) छोड़ो भी, यह कोई आथेल्लो है? यह तो दो टके वाले किसी नाटक का हीरो है। हेयर कटिंग सैलून की गंध अपने साथ स्टेज पर लाने वाला। तुमने कभी गणपतराव का काम देखा था?

दू. दर्शक : कौन गणपतराव? जोशी?

प. दर्शक : जोशी को किसने देखा है? मैं गणपतराव बेलवलकर की बात कर रहा

हूं। उनके स्टेज पर पैर रखते ही मन में अफ्रीका का घनघोर जंगल समा जाता था। जब वे क्रोध करते थे तो लगता था कि स्टेज पर पेट्रोल की खान में आग लग गई है। वाह! तीनों सप्तकों में चीते की तरह दौड़ने वाला लाजवाब स्वर था। कलेजे में समा जाने वाला अभिनय। अरे भई, बेलवलकर जब मुट्ठी बांधते थे तो दर्शकों को लगता था जैसे उनके प्राण ही उन्होंने अपनी मुट्ठी में कस लिए हों। नट सम्राट की उपाधि देकर महाराष्ट्र ने उनका यों ही सम्मान नहीं किया। कहां राजा भोज और कहां यह गंगुआ तेली!

दू. दर्शक : आयु का भी परिणाम होता है, साहब। पचास साल उलटते ही आदमी को अपने पीछे राजा भोज और गंगुए तेली दिखाई देने लगते हैं।

प. दर्शक : तुमने बेलवलकर को कभी नहीं देखा?

दू. दर्शक : नहीं, उनकी रोचक दंत कथाएं-भर सुनी हैं। चलिए, दूसरी घंटी बजी—

प. दर्शक : वह देखो, बूढ़ा वहां बैठा है न? ऐसा ही चेहरा-मोहरा और ऐसी ही कद काठी थी उनकी।

दू. दर्शक : और फिर भी नट सम्राट थे।

प. दर्शक : अरे, यह तो रास्ते का एक भिखारी है। वे थे रंगभूमि के राजा। केवल साधारण समानता को देखो।

दू. दर्शक : देख लिया। अब चलो चलें। एक ही अंक बचा है।

जाने लगते हैं। जाते-जाते पहला दर्शक अप्पा के पास रुकता है और थामा हुआ लिफाफा उनके हाथ पर रख देता है।

प. दर्शक : यह लो, बूढ़े बाबा!

अप्पा : मेहरबानी आपकी— (**जाने लगते हैं तो**) सुनिए, आप मेरे बारे में बात कर रहे थे?

प. दर्शक : नहीं, दद्दा! हम बेलवलकर की बात कर रहे थे।

अप्पा : गणतपराव बेलवलकर?

प. दर्शक : आप जानते हैं उन्हें?

अप्पा : अजी, एक ही कंपनी में थे हम। मर गया बेचारा?

प. दर्शक : गणपतराव मर गए? समाचारपत्रों में तो कभी देखा नहीं।

अप्पा : कैसे देखोगे? वे संवाददाताओं को बुलाना भूल गए। खैर छोड़िए भी। मामूली बात है। आखिर मृत्यु है ही क्या? सच्चे-झूठे आंसुओं का एक लोटा-भर पानी। रुपया-पैसा हो तो वारिस की वाह-वाह, न हो तो निंदा। समाचारपत्रों में एक काली चौखट। अधिक-से-अधिक

अग्रलेख। और बहुत हुआ तो सौ-पचास लोगों का 'दो मिनट खड़े होकर मौन!' सच कहता हूं आपसे, यदि जीवित आदमी यह जानता कि मरने से वह कितना मर जाता है, तो कोई भी मरने को तैयार न होता— और न जीने को भी! बस, बेलवलकर मर गया, अच्छा हुआ।

दू. दर्शक : विक्षिप्त होते हुए भी बूढ़ा अकलमंदी की बातें कर रहा है। चलो, एक ही अंक शेष है और सो भी अब आधा रह गया होगा।

प. दर्शक : आज पहली बार यह खबर सुन रहा हूं। पता लगाना चाहिए।

दोनों दर्शक जाते हैं। दूसरी ओर से 'राजा' आता है।

राजा : क्या कह रहे थे वे?

अप्पा : (**हंसते हैं**) खूब बनाया उन्हें। बता दिया कि बेलवलकर मर गया।

राजा : कौन साला बेलवलकर?

अप्पा : नट था।

राजा : मरा नहीं है वह?

अप्पा : मैं भी क्या जानूं? कौन जीता है और कौन मरता है, उसकी सूची तो कौओं के पास होती है। पर भले लोग थे। मुझे खाने के लिए वह दे गए।

राजा : फेंक दो उसे, बाबा! जूठन की ऐसी भीख किसी से न लिया करो। तुम्हें भूख लगी है न?

अप्पा : नहीं लगी है। सच तो यह है कि पता ही नहीं चलता, लगी है या नहीं।

राजा : मैं यह बढ़िया मुलायम पपड़ी लाया हूं तुम्हारे लिए। लो।

लिफाफा देता है और नीचे जमीन पर बैठ जाता है।

राजा : बाबा, तुम मेरी बात मानोगे?

अप्पा : मानूंगा, राजा, मानूंगा।

राजा : बस। राजा! इतने प्यार से किसी ने अब तक मुझे पुकारा ही नहीं। बस अब तय रहा, बाबा! मैं आज तुम्हें अपने घर ले जाऊंगा।

अप्पा : (**कौतूहल-भरे स्वर से**) तुम्हारा घर है, राजा?

राजा : अरे भई, घर का मतलब है खास बोंबे वालों का आकाशमहल। वहां जो रेल का पुल है न, उसकी कमानी के नीचे। पर जगह आरामदेह है, बाबा! और हम अपनी बस्ती में शेर हैं। बीस-पच्चीस लोग रहते हैं दो कमानियों में। पर सब हमें मानते हैं। हम भी रोज रुपया-डेढ़-रुपया खर्च कर देते हैं उन सब पर। किसी का चाय-पानी, किसी का ठर्रा, किसी की डबलरोटी। एक बूढ़ी घाटिन है हमारे आकाशमहल में। वह हमें रोटी बना देती है। गर्मागरम, बढ़िया। आज रात तुम उसे देखोगे ही, हम रोटी का पैसा देते हैं और दवा-दारू भी करते हैं

उसकी। अरे, पैसे का क्या अचार डालना है? साली रंडियां भी पैसा कमाती हैं। आदमी बने रहना चाहिए बाबा, आदमी बने रहना चाहिए।

अप्पा : (**लड़के का सिर हिलाते हुए**) राजा, कितने अच्छे हो तुम! तुम्हारे मां-बाप यहां नहीं हैं, राजा?

राजा : बाबा, तुम्हें तुम्हारे बच्चों ने छोड़ दिया, मुझे मेरे मां-बाप ने छोड़ दिया।

अप्पा : (**नाराज होकर**) तुम्हें छोड़ दिया? मेरे सामने लाओ उन्हें। चमड़ी उधेड़ लूंगा मैं उनकी। बदमाश!

राजा : वे हैं दो सौ मील दूर। और बाबा, वे भी क्या करते? घर में आठ मुंह खाने वाले और चार हाथ कमाने वाले। मैंने पढ़ना छोड़ दिया और एस.टी. पर कुलीगीरी करने लगा। लेकिन फिर भी गुजारा नहीं हुआ साला। एक दिन गुस्से में बाप ने मुझे ठोकरें मारीं और घर से निकाल दिया। मैं फौरन चल पड़ा और बंबई पहुंचा। चार-पांच रुपये अब किसी-न-किसी तरह कमा ही लेता हूं यहां।

अप्पा : तुम्हें घरवालों की याद नहीं आती, राजा?

राजा : साला वक्त किसे है, याद आने के लिए? और अब हम सेप्रेट हो गए हैं। पिछला रास्ता छूट गया, अब तो अगला रास्ता देखना है।

अप्पा : शाबाश! यह सेप्रेट होना व्यक्ति को सधना चाहिए।

राजा : आप पढ़े-लिखे समझदार लोग यही भूल करते हैं, बाबा! मां, बाप, भाई, बहन, चाचा-मामा सब एक-दूसरे की टांग में टांग फंसाए रहते हैं और अपनी-अपनी गोटें भिड़ाने का प्रयत्न करते रहते हैं। और सब-के-सब गिरते हैं और चिल्लाते रहते हैं। तुम इस उलझन में फंस गए, इसीलिए तो तुम्हारा सिर फिरा? बाबा, भगवान आदमी को दुनिया में भेजता है तो पर्चियां लगाकर नहीं कि वह फलां का बाप या लड़का है। जो दिल के रास्ते अपनी बस्ती में आए वही सच्चे हैं। बाकी सब झूठ। झंझट साले केवल। बाबा, अब तुम ठीक हो न?

अप्पा : काफी ठीक हूं, राजा! ऐसा लगता है जैसे तहखाने से बाहर निकल आया हूं।

चारों ओर का प्रकाश एकदम कम हो जाता है। आस-पास की कई बत्तियां बुझ जाने के कारण चबूतरे की बत्ती और नाट्यगृह पर लगे दो ट्यूब ही जलते रहते हैं।

अप्पा : (**चौंककर**) उजाला फिर से एकदम कम हो गया, राजा? या मुझे ही कुछ ...

राजा : नाटक खत्म हो गया, बाबा! इसलिए बत्तियां बुझ गईं। आठ बज रहे

होंगे ... चलो अब घर। (**उठता है**) दिल से इकरार है हमारा। अब तुम और कहीं भटकते नहीं फिरोगे, उल्टा-सीधा नहीं खाओगे, अनाप-शनाप नहीं बोलोगे। आराम से बस्ती में रहोगे और बड़प्पन से बस्ती की देख-भाल करोगे। है मंजूर?

अप्पा : मंजूर है। तुम जो बताओगे करूंगा, राजा, तुम जो बताओगे करूंगा।

विठोबा आता है। आगे बढ़कर अप्पा के पैर छूता है।

विठोबा : अप्पा साहब ...!

अप्पा : (**घबड़ाकर उठते हैं**) कौन? कौन हो तुम? मुझे कम सूझता है। मैं पूछता हूं, कौन हो तुम?

विठोबा : (**एक ओर हटकर**) अप्पा साहब, मुझे पहचाना नहीं आपने? मैं आपका विठोबा हूं।

अप्पा : विठोबा ? यानी, हेमलेट के बाप का भूत?

राजा : इस आदमी को पहचानते हो, बाबा?

अप्पा : हां, हां, यह आदमी ही है। भूत का काम करता है, पर है आदमी ही, कुछ भूत आदमी का काम करते हैं। लेकिन यह उनमें से नहीं है। यह आदमी ही है। विठोबा, तुम यहां कैसे आए? क्यों आए?

विठोबा : भगवान ने मेरी मानता मान ली, अप्पा साहब! नट के पैर नट ने पहचान लिए। मैंने बंबई तक आपका पीछा किया और फिर नंदा साहब के यहां जाकर सबको बुला लिया। दो दिन सबने बंबई खोज डाली। आज मैंने थिएटर देखना शुरू किया। सोचा, आप किसी नाटक के आस-पास मिलेंगे। और वही हुआ। आधा घंटा पहले यहां आया था और आपको यहां बैठे देखा। माफ कीजिए, अप्पा साहब, पर मुझे लगा, आप शायद मेरी नहीं सुनेंगे। मैं फौरन नंदा साहब के यहां गया और साथ ले आया सबको। मैं टैक्सी से आगे आया, पीछे साहब की कार से सब लोग आ रहे हैं।

अप्पा : (**फिर से खोए-खोए से होकर**) सब लोग आ रहे हैं?

विठोबा : जी हां, सब लोग।

अप्पा : नन्ही भी?

विठोबा : जी हां। मना करते ही फैल गई लड़की और पहले से ही जा बैठी कार में।

अप्पा : और— और— सच बताओ, सरकार— मेरी कावेरी भी है उनके साथ?

विठोबा : (**आंखें पोंछता है**) अप्पा साहब ...

अप्पा : तुम रो रहे हो। हां— याद आ गया— कावेरी जिंदा नहीं है। कार्डेलिया की तरह मर चुकी है वह। हे भगवानं, घोड़ा-चूहा जिंदा रह सकते हैं

और मेरी कावेरी ही नहीं। नहीं ... अब वह कभी वापस नहीं आएगी। कभी भी नहीं! ... कभी नहीं। ... कभी नहीं।

राजा : बाबा, याद रखो। पिछला रास्ता छूट चुका है। तुम फिर उसी तहखाने में घुसने लगे। यह लोग तुम्हें घर ले जाएंगे। फटी हुई कम कीमती जरी की साड़ी की तरह कपड़े में लपेट रखेंगे और फिर खराब करेंगे तुम्हारा दिमाग। तुम हवा की तरह आजाद रहोगे तो सुख से रहोगे। अब और कहीं न जाना।

अप्पा : नहीं जाऊंगा, राजा, में अब नहीं जाऊंगा। विठोबा ...!

बाहर हार्न बजता है।

विठोबा : गाड़ी आ गई, अप्पा साहब! सब लोग आ गए। (**एक ओर जाकर**) इधर— मालकिन, साहब, इधर ...

अप्पा : मुझे पकड़ रखो, राजा! मुझे डर है, कहीं मैं गिर न पड़ूं।

राजा : तुम बैठ जाओ यहां। (**उन्हें चबूतरे पर बैठाता है**) मैं देखता हूं, तुम्हें कौन ले जाता है!

नलू, शारदा, नंदा, सुधाकर तथा सुहास प्रवेश करते हैं। जल्दी से चबूतरे की ओर जाते हैं। आगे बढ़कर जब अप्पा की सूरत, उनका लिबास देखते हैं तो सब लोग अपनी-अपनी जगह जम-से जाते हैं।

नन्ही क्षण भर आंखें गड़ाए देखती है और उसके बाद मां का हाथ छुड़ाकर तीर-सी आगे भागती है और 'अप्पा— दद्दा' कहती हुई उनकी कमर से लिपट जाती है।

नलू एकदम सिसकने लगती है ... व्याकुल होकर वह सुधाकर के हाथ का सहारा लेती है। शारदा भी आंखों से आंचल लगाती है। नंदा को नहीं सूझता कि वह क्या करे। विठोबा एक ओर जाकर खड़ा हो जाता है ... आंखें पोंछता है। लड़का—'राजा'—सबकी ओर आशंका की दृष्टि से देखता है और अप्पा के पास कुछ-कुछ आह्वानात्मक भाव से खड़ा है। अप्पा का क्षोभ अब कम होने लगा है।

सुहास : दद्दा! कितने— कितने बुरे हैं आप!

अप्पा : (**उसे सहलाते हुए**) नन्हीं! बदमाश, पाजी! कहां खो गई थी तू?

सुहास : झूठ मत बोलिए, मैं नहीं खोई थी, आप खो गए थे, अब फिर कभी न खोना, बताए देती हूं।

शारदा : सुहास ...!

अप्पा : नहीं खोऊंगा, बदमाश! और खो गया तो फिर मिलूंगा नहीं इस तरह।

जा, मां के पास जा, बेटा! नटखट, कचरे के डिब्बे-सी हालत हो गई है मेरी। आठ दिन तक मेरा जिस्म साफ करना पड़ेगा तुझे। जा ... बड़ी समझदार है मेरी ...

सुहास मां के पास जाती है।

राजा : बाबा, देर हो गई। हमें अब घर जाना चाहिए।

नलू : (**रुंधे स्वर में**) अप्पा, कहीं भी न जाइए। हमारे साथ चलेंगे आप।

नंदा : अप्पा, हम सबको आप माफ कर दीजिए। आप मेरे पास, नलू के पास कहीं भी रहें ... कुछ भी तकलीफ नहीं होगी। आपको। (**आगे बढ़कर**) चलिए, अप्पा ...!

राजा : (**अप्पा के सामने आकर**) साहब, इस बूढ़े को मैं अपने घर ले जाऊंगा। आपने छोड़ा, मैंने पाया। आपकी दुनिया का नहीं रहा अब यह। देखता हूं, कौन फिर से इसका दिमाग खराब करने के लिए ले जाता है इसे? चलो बाबा ...!

सुधाकर : बदमाश! तेरा इनसे क्या मतलब? घर ले जाकर लूटना चाहता है इन्हें? हटता है या नहीं? विठोबा, गाड़ी के पास इंसपेक्टर साहब खड़े हैं। बुला लाओ उन्हें। (**विठोबा के जाने के पहले ही जोर से पुकारता है**) जाधवराव—जाधवराव साहब ...

राजा : किसी के बाप से नहीं डरता मैं। मैं नहीं छोड़ूंगा अपने बाबा को।

पुलिस की वर्दी में जाधवराव आता है।

जाधवराव : क्या हुआ, मिस्टर सुधाकर?

सुधाकर : यह बदमाश अप्पा को हमारे साथ नहीं आने देता। उन्हें अपने घर ले जाना चाहता है।

जाधवराव : (**राजा के पास जाकर**) क्यों बे? दूर हट ...

राजा : नहीं हटूंगा। मेरा बाबा है यह। इनका कोई नहीं ...

जाधवराव : (**हाथ उठाकर राजा के मुंह पर उल्टे हाथ से थप्पड़ मारता है**) कमीने! ... (**गर्दन पकड़कर एक ओर धकेलता है**)।

राजा : (**मुंह और नाक से बहता खून कमीज के पल्ले से पोंछते हुए**) बाबा, तुम न जाओ। मेरी कसम है तुम्हें!

जाधवराव : (**उसका सामान उसके सामने फेंककर**) चल जा, निकल जा यहां से! अब रुका तो ... (**उस पर झपटता है**)।

अप्पा : (**जोश में उठकर सामने आते हैं**) बस! तलवारें म्यान में रखिए। रात की ओस से जंग लग जाएगा उन पर। भगवान ने तुर्कों से हमारी रक्षा की और अब हम ही एक-दूसरे का संहार करने पर आमादा हैं। बस! एकदम बस! इंस्पेक्टर साहब, यह थिएटर है। मेरा राज्य है। मैं अप्पा

बेलवलकर, नट सम्राट आपसे कह रहा हूं ... आप यहां से चले जाइये। इस थिएटर के संसार में सब झूठा होता है और इसलिए सब अच्छा होता है। उस दुनिया में जाइए, जहां असली शार्विलक असली चोरी कर रहे हैं, असली वृंदावन असली वसुंधराओं पर बलात्कार कर रहे हैं, असली मैक्बेथ अपने दोस्तों का खून कर रहे हैं, वहां जरूरत है आपकी (**चिल्लाते हैं**) जाइए ...!

सुधाकर : मि. जाधवराव, कृपा करके आप गाड़ी के पास ठहरिए। (**जाधवराव जाता है। अप्पा राजा के पास आकर उसके सिर पर, मुंह पर हाथ फेरते हैं**)।

अप्पा : मेरे राजा को मारा आपने। राजा को नहीं, मुझी को मारा है आपने। यह खून राजा का नहीं। मेरा खून है यह।

नलू : अप्पा, मेरी बात नहीं सुनेंगे आप? अपनी गुड़िया पर आपका गुस्सा अभी ठंडा नहीं हुआ?

अप्पा : मेरी लाडली गुड़िया राग और लोभ का कल्मष अब मेरे मन में बचा ही नहीं है। नहीं लाडली, मैं किसी पर नाराज नहीं हूं। चैत का सुनहरा प्रातःकाल मेरे शरीर से टपक रहा है। नये नाटक का पर्दा उठने का समय है यह। तीसरी घंटी बज रही है। धूप की सुगंध हवा में घनीभूत हो रही है। आर्गन पर नांदी के स्वर सुनाई पड़ने लगे हैं। और मेरी नटी तो पहले ही स्टेज पर जा बैठी है। मेरा इंतजार करती। राजा ने मुझसे कहा है कि यह थिएटर है। बस और क्या चाहिए? राजा मेरे पास आओ, बेटा! नन्ही, तू भी आ भवानी, (**दोनों को अपने पास लेते हैं**) नट के पास जो आखिर में शेष रहता है वह है केवल नाटक। कर्ण ने मरते समय अपना सोने का दांत दे डाला। मैं नाटक के सिवा दे ही क्या सकता हूं तुम्हें?

नंदा : अप्पा, यह बंबई है। चार लोग इकट्ठा हो जाएं तो बेइज्जती हो जाएगी आपकी और हमारी भी ... मैं आपके पैरों पड़ता हूं, अप्पा ... अब यहां से ...

अप्पा : (**अकेले पीछे चबूतरे पर जाकर**) दूर हटो। मैं कहता हूं, दूर हटो! ये प्रार्थनाएं बेकार हैं। दया दिखाने के लिए यह जूलियस सीजर किसी से प्रार्थना नहीं करता, और कोई प्रार्थना करे तो उस पर दया नहीं करता। सीजर अचल है, ध्रुवतारे की तरह—जिसकी अटलता का जवाब नहीं है सारे सितारों में। आकाश में लाखों अंगारे बिखरे हुए हैं। प्रत्येक अंगारा जल रहा है, चमक रहा है। पर अपने स्थान पर स्थिर रहने वाला केवल एक ही है—ध्रुव का तारा। असंख्य आदमियों की इस

दुनिया में भी ऐसे एक ही आदमी को जानता हूं जो अपनी जगह दृढ़ता से खड़ा रहता है। और वह हूं मैं। मैं हूं। वह जूलियस सीजर— मैं हूं आथेल्लो— मैं हूं प्रतापराव, सुधाकर और हेमलेट। और मैं हूं गणपतराव बेलवलकर, नट सम्राट। सब महापुरुष मेरी देह के शामियाने में समाए हुए हैं— और महापुरुषों के सीने— कातिलों की कटार के लिए स्थायी आह्वान हैं। चिरंतन आह्वान। वह देखो— वह देखो कातिलों ने अपनी कटारें निकाल ली हैं। मुझे— इस जूलियस सीजर को मारने के लिए। मुझे चारों ओर से घेर लिया है उन्होंने। वह कातिल चिल्ला रहा है— मारो-मारो! कटारें चलाओ— (**अपने सीने पर कटारें मारी जाने का अभिनय करते हैं**) चलाओ कटारें (**छटपटाते हुए आगे बढ़ते हैं**) कौन-कौन— ब्रूट्स तुम् भी?— तो मरो— सीजर— मरो—

नीचे गिर पड़ते हैं। सब चीख पड़ते हैं, दौड़ पड़ते हैं।

राजा : (**दौड़ता है**) बाबा! (**अप्पा के पास बैठता है**)।

अप्पा : यह होता है नाटक— राजा यह ...

पटाक्षेप

मैसर्स कल्याणी कम्प्यूटर सर्विसेज़, यमुना विहार दिल्ली-53 द्वारा लेज़र कम्पोज
मैसर्स ब्यूटी प्रिंटर्स, पहाड़गंज, नई दिल्ली द्वारा मुद्रित।